।। ॐ श्री गंगाईनाथाय नमः।।

स्पिरिचुअल साइंस

Spiritual Science

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर द्वारा प्रकाशित

वर्ष : 11 अंक : 121 जोधपुर : हिन्दी, अंग्रेजी व गुजराती मासिक पत्रिका जून– 2018 30/–प्रति

''देखो, मैं कल्कि अवतार हूँ। मेरी तस्वीर से ध्यान लगता है। मेरे जाने के बाद मेरी ''तस्वीर'' तो नहीं मरेगी! वह आपको जवाब देगी।

–समर्थ सद्गुरुदेव
श्री रामलाल जी सियाग

File Photo

www.the-comforter.org

ऑनलाइन शक्तिपात-दीक्षा प्राप्त करने के लिए लॉग-ऑन करें-
Web : www.the-comforter.org

मंत्र दीक्षा के लिये मोबाइल नम्बर डायल करें -
07533006009

यादों के पल

मनुष्य शरीर ही सर्वोत्तम मंदिर है।
मुझे प्रकाशपद शब्द के द्वारा सबकुछ मेरे अंदर ही मिला।

– समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

www.the-comforter.org

''ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः''

स्पिरिचुअल साइंस

Spiritual Science

गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर द्वारा प्रकाशित

बाबा श्री गंगाईनाथजी योगी (ब्रह्मलीन)

वर्ष : 11 अंक : 121 जोधपुर:- हिन्दी, अंग्रेजी व गुजराती मासिक पत्रिका जून – 2018

वार्षिक 300/– द्विवार्षिक : 600/– आजीवन (11 वर्ष) : 3000/– मूल्य 30/–

संस्थापक एवं संरक्षक :
पूज्य सद्गुरुदेव
श्री रामलालजी सियाग
(ब्रह्मलीन)

सम्पादक :
रामूराम चौधरी

कार्यालय :
Spiritual Science
पत्रिका
अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र

पो.बॉक्स नं.41,
होटल लेरिया के पास,
चौपासनी, जोधपुर (राज.) भारत

9784742595

E-mail :
spiritualscienceavsk@gmail.com

Ashram :
Adhyatma Vigyan Satsang Kendra
Near Hotel Leriya,
Chopasani, JODHPUR (Raj.)
INDIA - 342 003
☎ +91 0291-2753699
Mob. : +91 9784742595
e-mail :
avsk@the-comforter.org
Website :
www.the-comforter.org

अनुक्रम

सूर्य अपना काम करता है....4
सदगुरुदेव पर दृढ़ता से विश्वास (सम्पादकीय)....5
एकाग्रता....6
युग परिवर्तन का अर्थ संसार के प्राणी मात्र के परिवर्तन से है....7–8
Religious Revolution in the World....9
हृदय मंथन....10
योगियों की आत्मकथा....11
समर्पण....12
योग के आधार....13
मेरे गुरुदेव....14
संपूर्ण एकनिष्ठा सद्गुरुदेव में....15
मुक्ति का उपाय (कहानी)....16–17
मेरे लिए तो गुरु ही सर्वोपरि है....18
चित्र पृष्ठ....19–22
अनुभूतियाँ तथा रोगों व नशों से मुक्ति....23–25
मनुष्य और विकास....26
योग के बारे में....27
सद्गुरु के दिव्य शब्द....28
अनुभाव–प्रधान युग का आगमन....29
सद्गुरुदेव के प्रति अनन्य श्रद्धा–भक्ति....30
अहं से मुक्ति....31
विरोधी शक्तियों का प्रतिरोध....32
सिद्धयोग....33
सद्गुरुदेव का आदेश ही सर्वोपरि है....34
सद्गुरुदेव की दिव्य लेखनी से....35–36
सम्पादकीय शेष पृष्ठ....37
ध्यान विधि....38

www.the-comforter.org

"सूर्य अपना काम करता है"

"जब सूर्य उदय हो जाता है, तब भी चाँद-तारे आकाश में रहते तो हैं। होती है कोई कीमत उनकी? सूर्य उनका विरोध नहीं करता, वो अपना काम करता है। मगर वे अस्तित्व में रहते हुए भी दिन में, प्रकाश के हिसाब से, उनका कोई महत्त्व नहीं है।

अब इस देश का, इस धर्म का, इस संस्कृति का उत्थान चक्र शुरू हो गया है। हमारे पतन के काल को ऋषि-मुनि नहीं रोक सके, क्योंकि कालचक्र अबाध गति से चलता है। और हम पतन के काल से गुजरते हुए आ रहे थे। हर चीज की एक सीमा होती है। पतन की भी एक सीमा होती है। जब नीचे जगह ही नहीं है जाने की तो फिर उर्ध्वगमन शुरू हो जाता है। **अब संसार की कोई शक्ति इस धर्म के उत्थान को रोक नहीं सकेगी!"**

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

समर्थ सद्गुरुदेव के इन पावन अमृतमयी वचनों को ध्यान में रखते हुए ही वैदिक दर्शन का दिव्य संदेश जन मानस तक पहुँचाना है। आगे का कार्य उस परम शक्ति का है। सद्गुरुदेव का पावन मिशन, सद्गुरुदेव के तय सिद्धांतों के अनुसार ही फैलेगा।

-सम्पादक

www.the-comforter.org

सद्गुरुदेव पर दृढ़ता से विश्वास

परिवर्तन प्रकृति का अटल सिद्धांत है। सृष्टि में विकासवाद के सिद्धांत के अनुसार हर युग में, अधर्म और अन्याय बढ़ने पर, वह सृष्टि-रचयिता, मानव देह धारण कर धरा पर अवतरित हुआ हैं, इसका इतिहास गवाह है। प्रत्येक अवतार ने मानवीय विकासवाद के सोपान की सीढ़ी में, शिखर पर चढ़ने के लिए विकास के गाटे(पायदान) लगाए हैं। मत्स्य अवतार से श्री कृष्ण तक नौ अवतार हुए हैं। मनुष्य के अनवरत विकास में आज मानव के विकास का चित्रण दुनिया के सामने हैं।

अब मनुष्य दोराहे पर खड़ा है। बौखलाया सा, भयभीत, विकृत मानसिकता का शिकार, असीम शांति और नीरवता से कोसों दूर, जन्म-मरण में कोल्हू का बैल बना है। उसकी कोई यात्रा नहीं है। ईश्वर की श्रेष्ठतम कृति मानव अभी अपने अगले विकास की राह देख रहा है। वह समस्त दुःखों और विकृतियों से मुक्त होकर देवत्व जीवन जीना चाहता है।

मानव से अतिमानव के पथ को सुगम बनाने के लिए, विकासवाद के सिद्धांत में सर्वोत्तम सीढ़ी का सोपान लगाने के लिए समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग का भारत भूमि पर अवतरण हुआ।

सद्गुरुदेव सियाग ने मानव के विकास के लिए जो संजीवनी मंत्र का पथ बताया है, उस पर दृढ़ता से विश्वास किया जाए। सद्गुरुदेव के दिव्य वचनों पर दृढ़ता से विश्वास करना ही कार्य और आराधना की सिद्धि है।

सृष्टि विकास में सद्गुरुदेव सियाग ने मानव की पूर्णता के लिए जो दिव्य पथ बताया है। सद्गुरुदेव सियाग को अपना सद्गुरु मानने वाला शिष्य केवल उनकी बताई आराधना पद्धति से नियमित आराधना कर, विकास की कड़ी बनें।

सद्गुरुदेव सियाग ने अपने पंच भौतिक जीवन में रहते हुए जो अमर शब्द उच्चारित किये हैं, वो पूरी दुनिया के लिए अमर है-

-आप लोग जिस काम के लिए पधारे हैं, मैं उसका थोड़ा-सा सैद्धांतिक पक्ष पेश कर दूं। आज हम जो कुछ कर रहे हैं धर्म के नाम से, वो कर्मकाण्ड जो कर रहे हैं ठीक है, कोई बुरा काम नहीं कर रहे हैं। मगर उसका कोई क्रियात्मक बदलाव नहीं आता, कोई परिवर्तन नही आ रहा है। मैं जो आपको बताऊंगा, उससे आपमें एक अजीब तरह का परिवर्तन आ जाएगा।

-आज आप कथा सुनने जाते हो, सुनते हो तब बहुत अच्छी लगती है, क्योंकि वहाँ बैठकर सुनते हैं, उन सबके मन में सात्विक भाव होते हैं। पीछे वाली समस्या से छुट्टी और सब लोगों का एक ही विचार होता है, कुछ धार्मिक अनुष्ठान हो रहा है। और जब वह सुनता है तो उसको कर्णप्रिय लगता है, मगर ज्योंहि पीठ घुमाई, वैसा का वैसा, वो ही समस्याएँ, वो ही सब गड़बड़। यहाँ से ऐसे ही नहीं जाओगे,समझे। जो सुन रहे हो, जो कुछ मैं कह रहा हूँ, पहले आपको जंचेगा (समझ में नहीं आना) नहीं कि यह बात कैसे संभव होगी ? मगर जो परिवर्तन आ रहा है, वह मेरी आवाज से आ रहा हैं।

-1990 से मैं सार्वजनिक जीवन में आ गया। जब मैंने यह काम शुरू किया, तब मैंने BBC (बीबीसी) से एक संस्मरण सुना था कि एड्स से अंतिम लड़ाई, भारत की भूमि पर होगी, अंदर से आत्मा की एक आवाज बड़ी तेज आई कि भारत उसको डिफीट Defeat (शिकस्त, हराना) दे देगा, पछाड़ देगा।

उस वक्त तो मैं, यह नहीं समझता था, मैं जानता था कि मैं, जो कुछ कर रहा हूँ, उससे कभी सिर दर्द भी मिटेगा ? उस वक्त की मेरी यह स्थिति थी और आज बड़ी स्थिति यह हुई कि मेरी तस्वीर का ध्यान करने से योग हो रहा है, एड्स खात्म हो रहा है, कैंसर खात्म हो रहा है-केवल तस्वीर के ध्यान से।

-आप जन्म से पूर्ण हो, आप शरीर नहीं, आत्मा हो। मैं आपको कुछ नहीं दूँगा, मैं तो आपको अपने आपसे परिचय करादूँगा।

-मेरा उद्देश्य है वैदिक दर्शन को विश्व दर्शन बनाना।

-आप किसी भी बीमारी से ग्रसित हो, नाम जप व ध्यान द्वारा पूर्णतः ठीक हो जाओगे।

-नाम निरन्तर जपोगे तो चाहे एड्स, कैंसर या कोई भी रोग हो, उससे

शेष पृष्ठ 37 पर....

एकाग्रता

समर्थ सद्गुरुदेव
श्री रामलाल जी सियाग

मुझमें जो परिवर्तन आया 'मूर्ति' से, बड़ा अजीब परिवर्तन आया।

जो परिवर्तन आ रहा है, वो मेरी आवाज से आ रहा है। मैं आपको बताऊँ; मुझे आराधना करनी पड़ गई। हर आदमी को जीवन में परेशानियाँ आती हैं, उतार-चढ़ाव आता है तो मुझे भी आई। मुझे भी आराधनाएँ करनी पड़ गई। डॉक्टरों ने कहा कि कोई रोग नहीं है।

तांन्त्रिकों ने कहा ये मारकेश की दशा है। मैं नहीं जानता था, **मारकेश क्या होता है?** जब उनसे पूछा तो बताया कि मारकेश का मतलब होता है **'मौत'**! मैंने कहा- ये तो सबको आएगी। कहने लगे कि बचा भी जा सकता है। मैंने कहा- कैसे? तो उन्होंने कहा **'महामृत्युंजय'** का जप करो। वो बड़ा लम्बा-चौड़ा कर्मकाण्ड था। मैंने कहा कि ये मेरे से तो नहीं होगा।

कहने लगे-गायत्री मंत्र के जप से भी हो सकता है। मैंने कहा ये तो कर लूँगा। फिर सवा लाख गायत्री मंत्र का जप किया। पण्डितों ने जनेऊ भी धारण करवाई, पानी भी अलग से रखना होता था, मगर अब समझ रहा हूँ कि सवा लाख का कोई मतलब नहीं है।

मंत्र जप के दौरान उस पाँच मुँह की तस्वीर से निरन्तर एक प्रार्थना थी कि जीवन बचा ले। **इस प्रकार मुझमें जो परिवर्तन आया वो मेरी एकाग्रता से आया।**

हमारे देश में लोगों को मूर्ति पूजक कहते हैं। ऑर्थोडोक्स है। पहले सगुण में जाओगे फिर निर्गुण में जाओगे। सीधा ऊपर कैसे जाओगे? मुझमें जो परिवर्तन आया 'मूर्ति' से, बड़ा अजीब परिवर्तन आया।

❖❖❖

युग परिवर्तन का अर्थ संसार के प्राणी मात्र के परिवर्तन से है।

तामसिक शक्तियों से युद्ध- प्रारम्भ में तो भयभीत करके रास्ते से हटाने का प्रयास किया। इसमें जब उन्हें सफलता नहीं मिली तो प्रलोभन आदि के रंगीले चित्र दिखाकर आकर्षित करने का प्रयास करती रही। जब ये दोनों हथियार काम नहीं आये तो आज कल **'हितैषी का स्वांग'** रचकर **गुमराह** करने का प्रयास करने में लगी हैं।

मैं देख रहा हूँ कि उनका यह हथियार भी असफल हो रहा है। उनका अगला कदम मेरे विरोध में प्रचार करने का होगा। **मुझे इसका पूर्ण ज्ञान है, यह आखिरी हथियार मेरे लिए सहायक सिद्ध होगा।** क्योंकि इनके विरोध से मेरे प्रचार की गति बहुत तेज हो जायेगी। **इससे ये तामसिक शक्तियाँ अपना संतुलन खो देंगी। इनके संतुलन खोने का अर्थ है, इनका अन्त।** यह आगे होने वाली घटनाओं का चित्र हैं, जो कुछ होना हैं, सब अनिवार्य हैं। इसमें **रत्ति भर** का भी अन्तर नहीं आ रहा है। क्योंकि मेरा कार्यक्षेत्र **सार्वभौम** है।

युग परिवर्तन का सम्बन्ध सम्पूर्ण संसार से है। पृथ्वी के किसी भाग विशेष के चेतन होने से इसका सम्बन्ध नहीं हैं। ईश्वरीय सत्ता के अवतरण के बिना **'युग परिवर्तन'** असम्भव है। आदि काल से ऐसा होता चला आया है। मैं देख रहा हूँ कि मेरे जीवन के प्रारम्भिक काल से ही तामसिक शक्तियाँ मुझ पर निरन्तर प्रहार करती चली आ रही हैं। प्रारम्भ में तो भयभीत करके रास्ते से हटाने का प्रयास किया। इसमें जब उन्हें सफलता नहीं मिली तो प्रलोभन आदि के रंगीले चित्र दिखा कर आकर्षित करने का प्रयास करती रही।

जवानी के काल में यह हथकण्डा अपनाया और बचपन में भयभीत करने का। जब ये दोनों हथियार काम नहीं आये तो आज कल **'हितैषी का स्वांग'** रचकर **गुमराह** करने का प्रयास करने में लगी है।

मैं देख रहा हूँ कि उनका यह हथियार भी असफल हो रहा है। उनका अगला कदम मेरे विरोध में प्रचार करने का होगा। मुझे इसका पूर्ण ज्ञान है, **यह आखिरी हथियार मेरे लिए सहायक सिद्ध होगा।** क्योंकि इनके विरोध से मेरे प्रचार की गति बहुत तेज हो जायेगी। इससे ये तामसिक शक्तियाँ

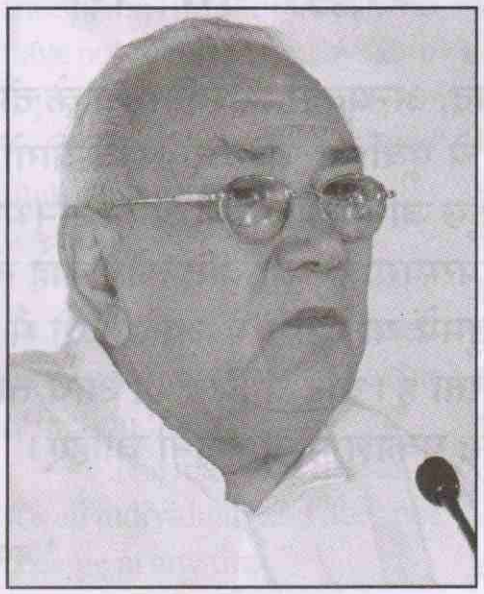

अपना संतुलन खो देंगी। इनके संतुलन खोने का अर्थ है, इनका अन्त। **यह आगे होने वाली घटनाओं का चित्र हैं, जो कुछ होना हैं, सब अनिवार्य हैं।** इसमें **रत्ति भर** का भी अन्तर नहीं आ रहा है। क्योंकि मेरा कार्यक्षेत्र **सार्वभौम** है। जितना अन्धकार **भारत** में हैं, **उतना कहीं नहीं हैं।**

अगर मेरा कार्यक्षेत्र भारत तक सीमित होता तो कठिनाइयाँ अधिक होती क्योंकि तामसिक शक्तियों की शक्ति सीमित होती है, जबकि सात्विक शक्तियों की शक्ति असीमित। इस संबंध में श्रीमां ने स्पष्ट कहा है :- **''भारत के अन्दर सारे संसार की समस्याएँ केन्द्रित हो गई हैं। और उनके हल होने पर सारे संसार का भार हल्का हो जायेगा।''**

भारत में सात्विकता की आड़ में असंख्य तामसिक शक्तियाँ, मानव को भ्रमित करके लूट रही हैं। मुझे अच्छी प्रकार बता दिया गया है कि इन तामसिक शक्तियों की भी ताकत क्षीण हो चुकी है।

मामूली सा विरोध करके ये परास्त हो जायेगी। परन्तु जिन चतुर लोगों ने धर्म को व्यवसाय के रूप में अपना रखा है, वे ही अधिक विरोध करेंगे। क्योंकि मेरा कार्य क्षेत्र सार्वभौम है, इसलिए इन धर्म के व्यवसाइयों की

पोल संसार के सामने खुल जायेगी। **ऐसी आराधना से लोग पूर्ण रूप से विमुख हो चुके हैं, जो प्रत्यक्ष परिणाम न दें।** इस युग का मानव अब अगले जन्म तक इन्तजार करने में विश्वास नहीं रखता। वह तो चाहता है कि जो कुछ भी वह करता है, उसके बारे में उसे **प्रत्यक्षानुभूति** होनी चाहिए कि उसका कुछ न कुछ परिणाम निकल रहा है। इस युग में प्रायः सभी धर्मों की आराधना **बहिर्मुखी** है तथा केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित है। जिसका परिणाम निकलना असम्भव है।

थोड़ी बहुत आराधनाएँ **अन्तर्मुखी** है परन्तु उनकी हद माया के क्षेत्र तक यानि कि **आज्ञाचक्र** के नीचे तक ही है। हमारे धर्म ग्रन्थों में स्पष्ट लिखा है कि मूलाधार से लेकर आज्ञाचक्र तक माया का क्षेत्र है। इससे भौतिक लाभ तो मिल सकता है, परन्तु आध्यात्मिक लाभ मिलना असम्भव है। **'आज्ञाचक्र का भेदन करके ही अध्यात्म जगत् में प्रवेश किया जा सकता है।'**

गीता के 8वें अध्याय के 16वें श्लोक में भगवान् ने स्पष्ट कहा है :-

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः
पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय
पुर्जन्म न विद्यते।। 8:16।।

''हे अर्जुन, ब्रह्मलोक से लेकर सबलोक पुनरावर्ती स्वभाव वाले हैं, परन्तु हे कुन्ती पुत्र मेरे को प्राप्त हो कर पुनर्जन्म नहीं होता।'' मेरे से सम्बन्धित लोगों को प्रत्यक्ष परिणाम मिल रहे हैं। क्योंकि यह परमसत्ता की शक्ति का ही प्रभाव है, जो कि सार्वभौम सत्ता है। अतः इस पर किसी धर्म विशेष या जाति विशेष का कोई एक मात्र अधिकार नहीं है। मुझे स्पष्ट बता दिया गया है कि यह शक्ति संसार के मानव मात्र के कल्याण के लिए प्रकट हो रही है।

अतः इसका प्रसार विश्व स्तर पर होगा। हाँ इसका केन्द्र तो निश्चित रूप से भारत ही रहेगा।

-समर्थ सद्गुरुदेव
श्री रामलाल जी सियाग
19.6.1988

www.the-comforter.org

श्रद्धा का मंत्र

''साधना पथ पर अवसाद, अन्धकार और निराशा के दौरों की एक परम्परा सी चली आती है। प्रतीत होता है कि ये पूर्वी या पश्चिमी सभी योगों के नियत अंग से रहे हैं। मैं 'स्वयं' इनके विषय में सब कुछ जानता हूँ, परन्तु अपने अनुभव के द्वारा मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि ये अनावश्यक परम्परा है तथा यदि कोई चाहे तो इनसे बच सकता है। यही कारण है कि जब कभी ये तुममें या दूसरों में आते हैं तो मैं उनके सामने श्रद्धा का मंत्र उद्घोषित करने का यत्न करता हूँ। यदि ये फिर भी आवें तो मनुष्य को उन्हें यथासंभव शीघ्र-से-शीघ्र पार करके पुनः प्रकाश में आ जाना चाहिए।''

संदर्भ-महर्षि श्री अरविन्द
'अपने विषय में' पुस्तक पृष्ठ-174

आराधना करने वाले साधकों में अमुमन ये स्थिति आती रहती है। बहुत मजबूत मन वाला साधक भी कई बार घबरा जाता है। इसलिए उलझन भरी अवस्था में बारम्बार सद्गुरुदेव से करूण प्रार्थना और मंत्र का सघन जाप जरूरी है। कुछ समय बाद स्थिति सामान्य हो जाती है। सद्गुरुदेव के प्रति असीम श्रद्धा का होना ही ऐसी कठिन और असमंजस की स्थितियों से मुक्ति दिलाता है।

Religious Revolution in the World

Impact of meditation

During meditation, many practitioners experience yogic postures and body movements happening automatically. The practitioner can neither start, stop nor control these yogic Kriyas (body movements) willfully. These Kriyas are specifically unique to each practitioner like a custom-made program.

This is because the divine force that is at work here through Guru Siyag's spiritual powers knows exactly which specific posture the practitioner needs to undergo to rid himself of body and mental ailments, and to progress on the spiritual path. The yogic postures under Siddha Yoga are therefore not standardized nor are they orchestrated willfully like those in a conventional yoga school.

An observer watching people meditate is often astonished to notice that almost each participant undergoes different yogic postures. Most practitioners also experience a sense of exhilaration and joy during meditation that they had never experienced before.

HOW TO GET INITIATED INTO SIDDHA YOGA

Guru Siyag initiates seekers into Siddha Yoga by giving them a divine mantra. There are different ways to receive the divine mantra from Guru Siyag: through video-CD & website: www.the-comforter.org

Please Note :

- The mantra is given through only by Gurudev Siyag' voice.
- This means that practitioners cannot reveal the mantra verbally, through writing or other gestures to those not present at the time of the mantra diksha (initiation) or who have not been initiated by Guru Siyag.
- It is Guru Siyag's voice that has an effect on the listener.
- Guru Siyag's voice comes from an enlightened body and that is why it has an effect on the listener.
- The mantra is the same for all individuals and does not change at any time.

BENEFITS OF SIDDHA YOGA

Brief background

Diseases that humans suffer from are classified by modern medical science into two broad categories — physical and mental. Indian yogis however learned that beyond physical and mental afflictions lies spiritual disease. In other words, the spiritual Law of Karma — actions of the past resulting in diseases and other forms of suffering in present life — governs human existence, life after life in a never-ending cycle.

In his treatise 'Yoga Sutra', Indian sage Patanjali classified the diseases into three categories – physical (Aadhidehik), mental (Aadhibhautik) and spiritual (Aadhidaivik).

A spiritual disease needs a spiritual remedy. Only regular practice of yoga under the guidance of a spiritual master like Guru Siyag can help the practitioner find a spiritual remedy for all his/her afflictions. It is only a Siddha Guru who can help a disciple to cut through the web of Karmic past, to get rid of diseases and to realize the true purpose of his life through self-realization.

❖❖❖

Count. to Next Edition

गतांक से आगे...

"हृदय मंथन"

मनुष्य किसी काम को बड़ा तथा किसी को छोटा समझता है। जो महत्त्व साधन करने का है, वही लोटे में पानी भरने का, कुटिया साफ करने का या कपड़े धोने का भी है। जब जो काम करना कर्त्तव्य हो, उस समय वही बड़ा है। अर्थात् काम बड़ा नहीं, कर्त्तव्य बड़ा है।

तुमने लिखाने के काम को महत्त्वपूर्ण मान लिया और आसक्त हो गए। लोटे में पानी भरने के काम को महत्त्वहीन समझा और भूल गए। बस यही तुम से गलती हो गई। इस में लिखने के काम का कोई दोष नहीं।

"पत्र लिखना जितना महत्त्वपूर्ण है, उसे लिफाफे में डालना, टिकट लगाना तथा लैटर बॉक्स में डालना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। यह सब यदि व्यवस्थित नहीं हो तो पत्र लिखना ही बेकार है। जब जिस काम का कर्त्तव्य हो, उससे लापरवाही, काम को बिगाड़ देती है। अपने मन को इस प्रकार संयत करो कि कर्त्तव्य कर्म करते समय एकाग्र हो तथा उसे छोड़ देने पर **मानसिक निवृत्ति** भी हो जाए।

अब यदि तुम काम करते समय भी, लिखने के विषय के बारे में सोचते हो तो यह गलत है। इस तरह मन नियंत्रण से बाहर हो जाता है। लिखते समय तुमको काम के बारे में विचार आते होंगे। यह भी गलत है। **लिखते समय लिखने में तथा काम के समय काम में एकाग्र, यह मन नियंत्रण का उपाय है।** अब जो तुम्हें लिखने के काम पर क्रोध आ रहा है, उस को शान्त करो। आसक्ति चाहे कितने ही सात्त्विक विषय में क्यों न हो, वह बंधनकारक ही होती है।"

मैंने कहा कि एकाग्र होकर कर्म करने का भला अध्यात्म से क्या संबंध है? महाराजश्री बोले, "है और घनिष्ट है। यदि कर्म में मन एकाग्र नहीं होता है तो इसका अर्थ यह है कि मन को एकाग्र होने की आदत नहीं है। एकाग्र मन जहाँ भी लगेगा, एकाग्र हो जाएगा। **चंचल मन को लेकर कोई ध्यान में एकाग्रता प्राप्त नहीं कर सकता।** *प्रश्न चंचलता समाप्त करने का है।*"

एक स्वामीजी ने महाराजश्री से बातचीत में उन्होंने अपने हृदय की वेदना व्यक्त की। कहने लगे, "हमने गुरुजी की बहुत सेवा की, किन्तु उस सेवा को गुरुजी ने अनदेखा कर दिया।" महाराजश्री एकदम चौंक पड़े, "अरे! इसमें दुःखी होने की क्या बात है! यह तो आपका सौभाग्य है कि आप आश्रम के पचड़े से बच गए। गुरुजी ने आप पर बड़ी कृपा की है जो आपको माया के गर्त में गिरने से बचा लिया। **दूसरी एक बात यह भी है कि आपने सेवा की ही नहीं। आपके मन में आश्रम प्राप्त करने की लालसा थी, जिसके लिए आप सेवा का दिखावा कर रहे थे।** सेवा से मन प्रसन्न होता है, जबकि आप दुःखी हो रहे हैं, किन्तु मैं फिर कहूँ कि गुरुजी का आप पर ही बहुत बड़ा उपकार है, नहीं तो जीवन भर लोगों के खाने-पीने की व्यवस्था में लगे रहते। आश्रम का खर्च पूरा करने के लिए लोभ वृत्ति उदय हो जाती। कोई न कोई समस्या नित्य खड़ी ही रहती। वैसे भी जो आश्रम, परम्परा से मिलता है, उसमें बहुत ही समस्याएँ होती हैं। अब चैन से भजन करो।" महाराजश्री ने उन्हें जो समझाया, उसका सारांश यह था।

(1) गुरुजी की सेवा करते समय, यदि आश्रम प्राप्ति का लक्ष्य मन में हो तो वह स्वार्थ होता है। सेवा में कोई आशा नहीं। **सेवा का अर्थ ही यही है कि उसके लिए कोई पारितोषिक, आदर, अधिकार, श्रेय आदि की कामना मन में हो ही नहीं।** सेवा में सेवा ही मुख्य होती है। संभव है गुरुजी ने आपको आश्रय देकर, आपकी सेवा के स्तर को नीचे न गिराना चाहा हो। यह भी संभव है-आपको आश्रम नहीं मिला, गुरुजी का आशीर्वाद मिला हो।

(2) यह संभव है कि आप एक अच्छे सेवक तो हो, किन्तु कुशल व्यवस्थापक न हो। सेना का हर अच्छा सिपाही मेजर या कर्नल नहीं बन सकता। आश्रम चलाने के लिये कुशल व्यवस्थापक के साथ-साथ अच्छा वक्ता, आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत, व्यवहार कुशल तथा सहनशील होना भी आवश्यक है। मैं नहीं जानता कि आप में यह गुण कहाँ तक विकसित हैं?

(3) एक गुरु के अनेक शिष्य हो सकते हैं। वह सभी शिष्यों को आश्रम नहीं दे सकता तथा यदि इस पर कोई आपति करे तो यह गुरु के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप है। गुरु को सभी शिष्य एक समान प्रिय होते हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं लगा लेना चाहिए कि जिस शिष्य को आश्रम दिया, वह सबसे अधिक प्रिय है।

(4) आश्रम किसी एक ही शिष्य को दिया जा सकता है, किन्तु गुरु अपनी कृपा सभी शिष्यों पर बनाए रखता तथा एक समान लुटाता है। **आश्रम की अपेक्षा कृपा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।**

एक साधक के लिए जरूरी है अपने सद्गुरुदेव का आदेश। उन्होंने जिस पथ पर चलने का आदेश दिया, साधक चलता रहे। गुरु आज्ञा ही सर्वोपरि है। शिष्य के लिए कल्याण का पथ है।

संदर्भ-स्वामी शिवोमतीर्थ
'हृदय मंथन-1

क्रमशः अगले अंक में...

योगियों की आत्मकथा

-परमहंस श्री योगानंद

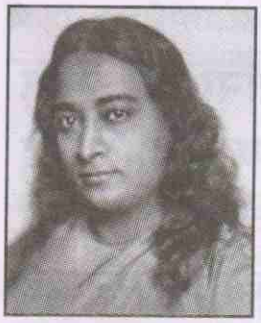

"पूज्यवर ! क्या विभ्रान्त, किंकर्तव्यविमूढ़ जनसाधारण के लिये आपके मन में कोई सहानुभूति नहीं है ?"

साधु महाराज पलभर के लिये चुप रहे, फिर सीधा उत्तर देना टालकर बोले:

"अदृश्य ईश्वर, जो सारे सद्गुणों का भण्डार है, और दृश्यमान मनुष्य, जिसमें प्रायः एक भी सद्गुण नजर नहीं आता-इन दोनों से एक साथ प्रेम करना प्रायः व्यक्ति को चकरा देता है। परन्तु विलक्षण बुद्धि का सामर्थ्य भी कम नहीं होता। अन्तःकरण का शोध शीघ्र ही सब लोगों के मन की एकता को प्रकट कर देता है-स्वार्थी उद्देश्यों की समानता।

कम से कम इस एक अर्थ में मानव की विश्वबंधुता का परिचय मिलता है। अहंकार को पूर्णतः पछाड़ देने वाला यह समानता का आविष्कार मनुष्य के मन में भयचकित विनम्रता उत्पन्न करता है। यह विनम्रता विकसित होते-होते आत्मा की निरामयकारिणी शक्तियों के अनुसन्धान की ओर कोई ध्यान न देनेवाले अपने जाति बांधवों के प्रति सहानुभूति में परिवर्तित हो जाती है।"

"महाराज ! सब युगों के सन्त आप ही के समान जगत् के दुःखों से व्याकुल हुए हैं।" "केवल तुच्छ व्यक्ति ही दूसरों के जीवन के दुःखों के प्रति संवेदनशीलता खो बैठता है क्योंकि वह अपने ही संकीर्ण दुःखों में डूबा रहता है।" साधु का उग्र रूप काफी सौम्य हो गया था। "जो किसी डॉक्टर द्वारा की जानेवाली चीर-फाड़ की भाँति अपने विचारों की चीरफाड़ कर मन का गहरा परीक्षण करेगा, वही अपने भीतर सबके लिये दया विकसित होती देखेगा। तब उसे अहंकार की नित्य कोलाहलकारी माँगों से मुक्ति मिल जायेगी। ऐसी ही मनोभूमि पर ईश्वर का प्रेम खिलता है।

तब वह जीव अपने स्रष्टा की ओर मुड़ता है, किसी और बात के लिये नहीं तो केवल अपनी व्यथा की तड़प में यह पूछने के लिये: 'क्यों, प्रभु, क्यों ?' दुःख के मानमर्दनकारी कोड़े खा-खाकर मनुष्य अंततः उस विधाता के समक्ष पहुँच ही जाता है जिसका सौन्दर्य मात्र ही मनुष्य को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये पर्याप्त है।"

उक्त साधु और मैं कोलकाता के कालीघाट मन्दिर में वार्तालाप कर रहे थे, जहाँ मैं उस मन्दिर का विख्यात सौन्दर्य एवं भव्यता देखने गया था। मन्दिर की अलंकारिक शोभा की ओर हाथ से इशारा करते हुए, उस सारे वैभव को साधु ने निष्प्रयोज्य ठहराया।

"ईंटें और गारा हमें कोई श्रवणीय सुर नहीं सुना सकते; केवल अन्तर से उठने वाली आवाज से ही हृदय के कपाट खुलते हैं।"

मन को आकृष्ट करनेवाली धूप का आनंद लेने के लिये हम प्रवेश द्वार की ओर गये, जहाँ भक्तों के झुण्डों का आवागमन चल रहा था।

"तुम अभी युवा हो।" साधु महाराज कुछ सोचते हुए मेरी ओर देख रहे थे। "भारत भी युवा है। प्राचीन ऋषियों ने आध्यात्मिक जीवन शैली के अमिट आदर्श स्थापित किये थे। उनके महान् उपदेश आज के समय और देश के लिये पर्याप्त हैं। उनके अनुशासन-नियम न तो आज के लोकाचार के विरुद्ध हैं, न ही ऐसे हैं कि भौतिकवाद की धूर्तता को भी कृत्रिम लगें और इसीलिये आज भी भारत पर उनकी पकड़ मजबूत है। लज्जित पंडितगण जितने काल का हिसाब लगा सकते हैं, उससे भी कहीं अधिक काल से-सहस्राब्दियों से-संशयशील समय ने वेदों की योग्यता की पुष्टि की है। इन्हें अपनी विरासत के रूप में ग्रहण करो।"

जब मैं इस वाक्पटु साधु से सविनय विदा ले रहा था, तब उन्होंने एक अतींद्रिय अनुभूति मुझे बताई:

"यहाँ से जाने के बाद तुम्हें आज एक असाधारण अनुभव होगा।"

मन्दिर के अहाते से बाहर निकल कर मैं निरुद्देश्य यूँ ही चलने लगा। मुड़कर दूसरे एक रास्ते पर बढ़ा ही था कि एक पुराने परिचित से भेंट हो गयी। ये महाशय उन महाभागों में से एक थे जिनकी संभाषण शक्ति समय की ओर कोई ध्यान न देते हुए अनंत काल का आलिंगन करती है।

"मैं तुम्हें जल्दी ही छोड़ दूँगा," उसने वचन दिया, "यदि तुम जल्दी-जल्दी मुझे हमारे बिछुड़ने के बाद के वर्षों में क्या-क्या हुआ वह सब बता दो।"

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

समर्पण

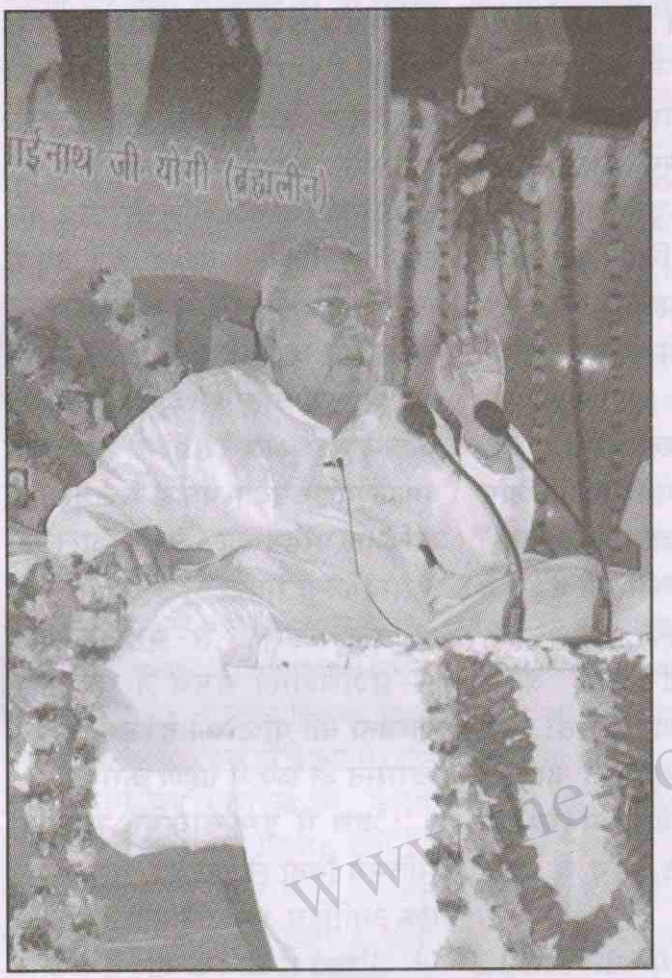

व्यक्तिगत 'अहं' चेतना की सुदृढ़ दीवार है जिसमें हम स्वयं को बन्द कर लेते हैं। हम प्रत्येक वस्तु का नाता अपने से जोड़ लेते हैं। सोचते हैं, मैंने यह किया, मैंने वह किया, मैंने क्या नहीं किया? इस क्षुद्र 'मैं' से छुटकारा पाओ, अपने अन्दर घुसी हुई इस पैशाचिकता को मार डालो। "मैं नहीं तू ही है" - यही कहो, यही अनुभव करो, उसके अनुसार ही जियो। जब तक हम 'अहं' निर्मित इस संकुचित दुनिया का परित्याग नहीं कर देते, तब तक हम स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते।

शक्ति के पूज्य वे मौन पुरुष हैं, जो केवल जीवित रहते हैं और स्नेह करते हैं तथा चुपचाप अपने व्यक्तित्व को कर्म क्षेत्र से हटा लेते हैं। वे कभी 'मैं' और 'मेरा' की रट नहीं लगाते। वे केवल निमित्त बनने में ही स्वयं को कृतार्थ मानते हैं। ऐसे मनुष्यों में से ही ईसा और बुद्ध प्रकट होते हैं। वे मानव रूप में पूँजीभूत आदर्श मात्र होते हैं, उसके अतिरिक्त कुछ नहीं।

परमात्मा ने स्वयं को सर्वोत्तम ढंग से छिपा रखा है, अतः उसका कार्य ही सर्वश्रेष्ठ है। इसी प्रकार जो अपने को सर्वोत्तम ढंग से पीछे रख सकता है, वही सबसे अच्छा और अधिक कार्य कर सकता है। अपने आप पर विजय पा लो तो समस्त विश्व तुम्हारा हो जाएगा।

संदर्भ-स्वामी विवेकानंद
'सिंहनाद' पुस्तक से

-श्री अरविन्द

"योग के आधार"

श्रद्धा, अभीप्सा, आत्मसमर्पण

इस योग की माँग यह है कि भागवत सत्य का आविष्कार करने और उसे मूर्तिमान करने की अभीप्सा में ही अपने जीवन को पूर्ण रूप से उत्सर्ग कर दिया जाये, अन्य किसी भी चीज के लिये नहीं। अपने जीवन को भगवान् तथा किसी ऐसे बाह्य लक्ष्य और कर्म के बीच, जिसके साथ सत्यानुसंधान का कोई संबंध नहीं, बाँट देना-इस योग में नहीं चल सकता। इस तरह की एक मामूली-सी बात भी योग में सफलता प्राप्त करना असंभव बना देगी। तुम्हें अपने अंदर प्रवेश करना होगा और आध्यात्मिक जीवन के प्रति पूर्ण आत्मोत्सर्ग करना होगा। अगर तुम योग में सफलता प्राप्त करना चाहो तो तुम्हें अपनी मानसिक अभिरुचियों को पकड़े रखने की वृत्ति को दूर हटाना होगा, अपने प्राण के लक्ष्यों, स्वार्थों और आसक्तियों के प्रति किसी प्रकार का हठ नहीं रखना होगा, अपने परिवार, मित्रमंडली और देशादि के प्रति अहंकारपूर्ण मोह-ममता का त्याग करना होगा। जो कुछ बहिर्मुखी शक्ति या क्रिया के रूप में प्रकट होने वाला होगा, वह एकमात्र उस सत्य से ही आयेगा जो एक बार प्राप्त हो चुका है, न कि निम्नतर मानसिक या प्राणिक प्रेरणाओं से, एकमात्र भागवत संकल्प-शक्ति से आयेगा न कि व्यक्तिगत पसंद या अहंकार की अभिरुचियों से।

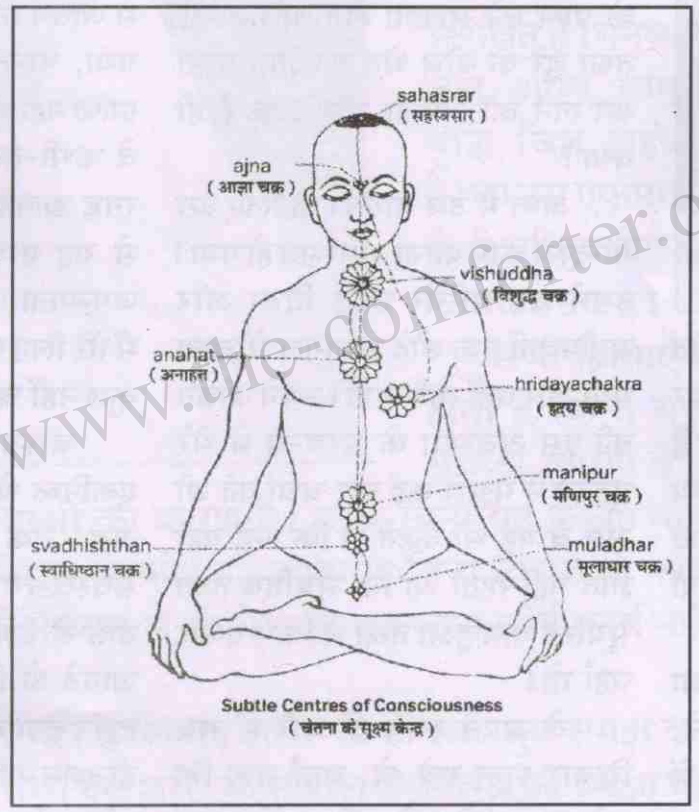

Subtle Centres of Consciousness
(चेतना के सूक्ष्म केन्द्र)

मानसिक सिद्धांतों का कोई वास्तविक मूल्य नहीं, क्योंकि हमारी सत्ता का झुकाव जिस ओर होता है उसी का पोषण करने वाले सिद्धांतों को हमारा मन या तो बना लेता या स्वीकार कर लेता है। वास्तव में सबसे प्रधान बात है भगवान् की ओर तुम्हारा झुकाव और तुम्हारे अंदर की पुकार।

इस बात का ज्ञान होना ही एक परम सत्ता चैतन्य और आनंद (सत्-चित्-आनंद) है जो केवल अभावात्मक निर्वाण या अचल-अटल और निराकार कैवल्य ही नहीं है, बल्कि गतिशील भी है, और यह बोध उत्पन्न होना कि यह भागवत चेतना केवल विश्व के परे जाकर ही नहीं वरन् यहाँ भी उपलब्ध की जा सकती है, तथा इसके फलस्वरूप भागवत जीवन को योग के उद्देश्य के रूप में स्वीकार करना - ये सब बातें मन की नहीं हैं। यह कोई मानसिक सिद्धांत का प्रश्न नहीं है-यद्यपि मन के द्वारा इस दृष्टिकोण का भी समर्थन, अधिक अच्छे रूप में न भी सही, कम-से-कम उतने अच्छे रूप में तो किया ही जा सकता है जितने अच्छे रूप में अन्य किसी दृष्टिकोण का किया जा सकता है - बल्कि यह प्रश्न अनुभव का है और जब तक अनुभव नहीं प्राप्त होता, तब तक अंतरात्मा की उस श्रद्धा का है जो अपने साथ मन और प्राण की अनुरक्ति को भी ले आती है।

क्रमशः अगले अंक में...

गतांक से आगे....

! ! मेरे गुरुदेव ! !

-स्वामी विवेकानन्द

वास्तव में वे अपने ध्येय में एकनिष्ठ थे। उन्हें यह मालूम था कि जब तक जगन्माता के लिए सर्वस्व-त्याग नहीं किया जाता, तब तक वे दर्शन नहीं देती। वे यह भी जानते थे कि जगन्माता प्रत्येक को दर्शन देना चाहती हैं, परन्तु लोग स्वयं ही दर्शन नहीं चाहते।

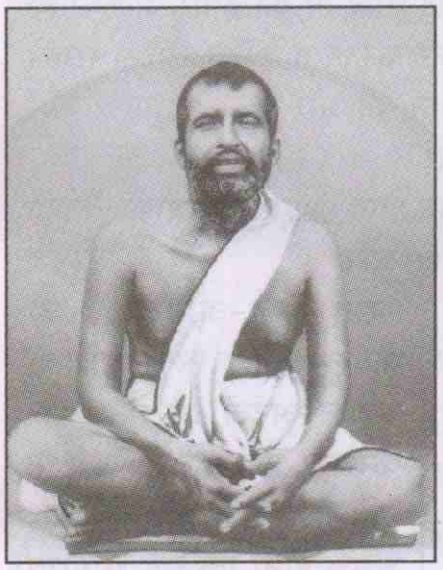

कुछ क्षण के लिए हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे लिए स्वर्ग का द्वार खुल जायेगा और ऐसा प्रतीत होता है कि हम स्वर्गीय दिव्य प्रकाश में तन्मय हो जाएंगे, परन्तु फिर थोड़ी देर बाद हमारा पाशविक अंश हमें इन दैवी दृश्यों से दूर पटक देता है।

हम फिर पशु के समान नीच दशा में पहुँच जाते हैं और खाने, पीने, मरने, जन्म लेने और फिर खाने-पीने में व्यस्त हो जाते हैं। परन्तु कुछ असाधारण पुरुष ऐसे होते हैं कि उनके सामने चाहे कितने भी प्रलोभन क्यों न हो, पर यदि उनका मन एक बार ध्येय की ओर आकर्षित हो गया तो फिर वह मायाजाल द्वारा इतनी सरलता से विचलित नहीं होता, क्योंकि वे सत्यस्वरूप परमेश्वर के दर्शन करने के इच्छुक होते हैं और यह भली भाँति जानते हैं कि यह जीवन नाशवान है। उनका यही मत रहता है कि उच्च प्रकार की विजय प्राप्ति के लिए यदि मरना भी हो तो अत्युत्तम है। और वास्तव में पाशविक अंश के ऊपर विजय प्राप्त कर लेने तथा जन्म-मरण के प्रश्न को सुलझा लेने और अच्छे तथा बुरे के बीच भेद का ज्ञान प्राप्त कर लेने की अपेक्षा और श्रेष्ठ है ही क्या?

अन्त में उस बालक के लिए उस मन्दिर में काम करना असम्भव हो गया। उसने वह मन्दिर छोड़ दिया और समीपवर्ती एक छोटे से जंगल में चला गया और वहीं रहने लगा। अपने जीवन की इस अवस्था के सम्बन्ध में मेरे गुरुदेव ने मुझसे कई बार चर्चा की थी और वे यह भी कहते थे कि उन्हें यही ज्ञात नहीं रहता था कि सूर्योदय तथा सूर्यास्त कब हुआ तथा वे किस प्रकार वहाँ रहे।

वे अपने स्वयं के बारे में सब विचार भूल गये थे, यहाँ तक कि भोजन करने को भी उन्हें ध्यान नहीं रहता था। इस समय उनके एक सम्बन्धी ने बड़े प्रेमपूर्वक उनकी देखभाल की और वह उनके मुँह में भोजन डाल दिया करता था, जो वे केवल निगल लेते थे।

इसी प्रकार इस बालक के कितने ही दिन-रात बीत गये। जब एक पूरा दिन बीत जाता और सन्ध्या के समय मन्दिरों से घण्टियों की झंकार तथा भजनों की गूँज इस बालक को वन में सुनायी देती थी तो वह बड़ा दुःखित हो कल्पते हुए यह चिल्लाने लगता कि 'हे माता ! आज का भी दिन व्यर्थ चला गया और तुने दर्शन नहीं दिया-इस छोटे से जीवन का एक दिन और व्यतीत हो गया, परन्तु फिर भी मुझे सत्य की प्राप्ति नहीं हुई।' आत्म-व्यथा के कारण वे कभी-कभी अपना मुँह जमीन पर रगड़ डालते और उनके बिलखते मुँह से यह प्रार्थना निकल पड़ती, 'हे जगन्माता ! तू शीघ्र प्रकट हो जा-देख, मैं तेरे लिए कैसे तड़प रहा हूँ-मुझे और कुछ नहीं चाहिए।'

वास्तव में वे अपने ध्येय में एकनिष्ठ थे। उन्हें यह मालूम था कि जब तक जगन्माता के लिए सर्वस्व-त्याग नहीं किया जाता, तब तक वे दर्शन नहीं देती। वे यह भी जानते थे कि जगन्माता प्रत्येक को दर्शन देना चाहती हैं, परन्तु लोग स्वयं ही दर्शन नहीं चाहते-वे, और सब प्रकार की मूर्खतापूर्ण मूर्तियाँ-तो पूजा करने के लिए चाहते हैं, अपने आनन्द-भोग के इच्छुक होते हैं, जगन्माता के दर्शन के नहीं, किन्तु जिस क्षण वे अन्य सब कुछ छोड़कर तन-मन से उसके लिए छटपटायेंगे, बस उसी क्षण श्रीजगदम्बा उन्हें अवश्य दर्शन देंगी।

संदर्भ-विवेकानंद वॉल्यूम-7

क्रमशः अगले अंक में...

संपूर्ण एकनिष्ठता सद्गुरुदेव में

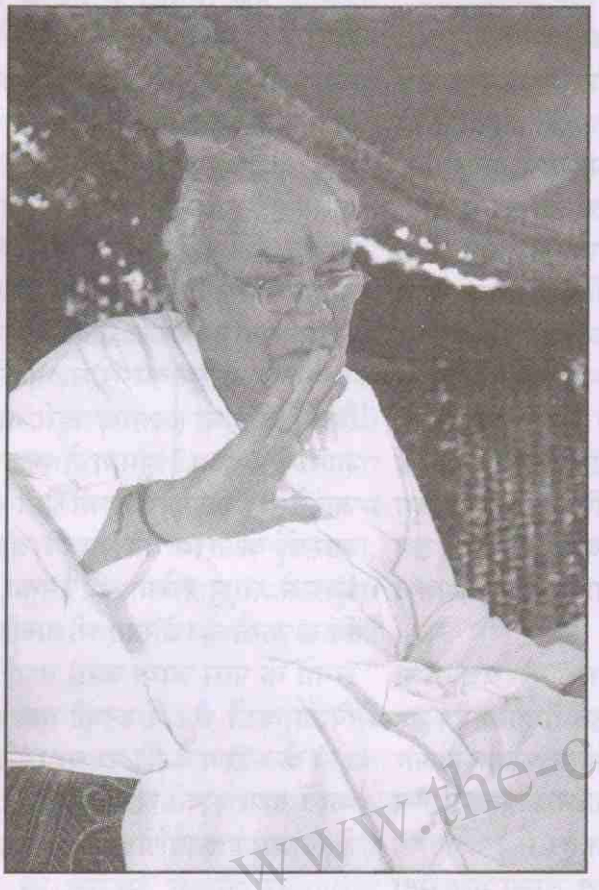

गुरुः शिवो गुरुर्देवो गुरुर्बन्धुः शरीरिणाम्।
गुरुरात्मा गुरुर्जीवो गुरोरन्यत्र विद्यते।।
87।। श्री गुरु गीता

अनुवाद : **मनुष्यों के लिए गुरु ही शिव है, गुरु ही देव है, गुरु ही बान्धव है, गुरु ही आत्मा है और गुरु ही जीव है। गुरु के सिवा अन्य कुछ भी नहीं है।**

व्याख्या : यह सम्पूर्ण दृश्य जगत् जड़-प्रकृति से रचित हैं। मनुष्य का शरीर भी पंचभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) से निर्मित हैं। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार भी जड़-प्रकृति से ही निर्मित है। जो उस एकमात्र चैतन्य तत्त्व आत्मा की शक्ति से ही सक्रिय होकर अपने-अपने गुणों के अनुसार क्रिया करता है।

सभी क्रियाएँ प्रकृति के गुणों के अनुसार ही होती हैं किन्तु यह चैतन्य तत्त्व आत्मा ही इन सबका कारण है। यह स्वयं क्रिया नहीं करता बल्कि वही सभी क्रियाओं का कारण है। उसके बिना यह प्रकृति कोई भी क्रिया नहीं कर सकती। यह वैसा ही है जैसे विद्युत के कोई भी उपकरण बिना विद्युत के कार्य नहीं कर सकते। विद्युत का कार्य इन उपकरणों के माध्यम से ही होता है, वह स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकती। ऐसा ही आत्मा और शरीर का संयोग है।

मनुष्य का अज्ञान यही है कि वह शरीर को ही सब कुछ समझ कर उसी की रक्षा व सुविधा का प्रयत्न करता रहता है तथा उस शरीर के संचालक आत्मा की उपेक्षा करता है। इसी अज्ञान के कारण वह दुःख भोगता है। इन दुःखों से निवृत्ति का एकमात्र उपाय उस चैतन्य तत्त्व आत्मा को जानना ही है। इस तत्त्व का ज्ञान कराने वाला एकमात्र गुरु ही है, अन्य कोई भी उसका ज्ञान नहीं करा सकता। **इसलिए गुरु को सामान्य मनुष्य न समझ कर उसे साक्षात् शिव, देवता परम बान्धव, सुहृद, सखा, मित्र, हितकारी मानकर उसी की शरण ग्रहण करनी चाहिए, जिस प्रकार अर्जुन ने भगवान् कृष्ण की शरण ग्रहण की थी।** गुरु ही आत्मज्ञान द्वारा मनुष्य को मुक्ति दिला सकता है। इसलिए गुरु को आत्म स्वरूप ही मानना चाहिए, उसी को जीवन मानना चाहिए। अन्य सभी का त्याग कर देना चाहिए। कृष्ण का भी अर्जुन को यही अन्तिम उपदेश था- (18/66)

एकमात्र आत्मा की, ईश्वर की अथवा ज्ञानी गुरु की शरण में जाना ही मार्ग है। अन्य कोई भी इस कार्य को नहीं कर सकता।

कहानी...

मुक्ति का उपाय

पुराण भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि है। पुराणों में मानव-जीवन को ऊँचा उठाने वाली अनेक सरल, सरस, सुन्दर और विचित्र-विचित्र कथाएँ भरी पड़ी हैं। उन कथाओं का तात्पर्य राग-द्वेषरहित होकर अपने कर्तव्य का पालन करने और भगवान् को प्राप्त करने में ही है। पद्मपुराण के भूमिखण्ड में ऐसी ही एक कथा आती है।

अमरकण्टक तीर्थमें सोम शर्मा नाम के एक ब्राह्मण रहते थे। उनकी पत्नी का नाम था सुमना। वह बड़ी साध्वी और पतिव्रता थी। उनके कोई पुत्र नहीं था और धन का भी उनके पास अभाव था। पुत्र और धन का अभाव होने के कारण सोम शर्मा बहुत दुःखी रहने लगा। एक दिन अपने पति को अत्यन्त चिन्तित देखकर सुमना ने कहा कि **'प्राणनाथ !** आप चिन्ता को छोड़ दीजिये; क्योंकि चिन्ता के समान दूसरा कोई दुःख नहीं है। **स्त्री, पुत्र और धन की चिन्ता तो कभी करनी ही नहीं चाहिये।**

इस संसार में ऋणानुबन्ध से अर्थात् किसी का ऋण चुकाने के लिये और किसी से ऋण वसूल करने के लिये ही जीव का जन्म होता है। माता, पिता, स्त्री, पुत्र, भाई, मित्र, सेवक आदि सब लोग अपने-अपने ऋणानुबन्ध से ही इस पृथ्वी पर जन्म लेकर हमें प्राप्त होते हैं। केवल मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी भी ऋणानुबन्ध से ही प्राप्त होते हैं।'

'संसार में शत्रु, मित्र और उदासीन-ऐसे तीन प्रकार के पुत्र होते हैं। शत्रु स्वभाव वाले पुत्र के दो भेद हैं। पहला, किसी ने पूर्वजन्म में दूसरे से ऋण लिया, पर उसको चुकाया नहीं तो दूसरे जन्म में ऋण देने वाला उस ऋणी का पुत्र बनता है। दूसरा, किसी ने पूर्वजन्म में दूसरे के पास अपनी धरोहर रखी, पर जब धरोहर देने का समय आया, तब उसने धरोहर लौटायी नहीं, हड़प ली तो दूसरे जन्म में धरोहर का स्वामी उस धरोहर हड़पने वाले का पुत्र बनता है। ये दोनों ही प्रकार के पुत्र बचपन से माता-पिता के साथ वैर रखते हैं और उसके साथ शत्रु की तरह बर्ताव करते हैं। बड़े होने पर वे माता-पिता की सम्पत्ति को व्यर्थ ही नष्ट कर देते हैं। जब उनका विवाह हो जाता है, तब वे माता-पिता से कहते हैं कि यह घर, खेत आदि सब मेरा है, तुम लोग मुझे मना करने वाले कौन हो? इस तरह वे कई प्रकार से माता-पिता को कष्ट देते हैं।

मित्र स्वभाव वाला पुत्र बचपन से ही माता-पिता का **हितैषी** होता है। वह माता-पिता को सदा संतुष्ट रखता है और स्नेह से, मीठी वाणी से उन को सदा प्रसन्न रखने की चेष्टा करता है।

उदासीन स्वभाव वाला पुत्र सदा उदासीन भाव से रहता है। वह न कुछ देता है और न कुछ लेता है। वह न रुष्ट होता है, न संतुष्ट, न सुख देता है, न दुःख'। इस प्रकार जैसे पुत्र तीन प्रकार के होते हैं, ऐसे ही माता, पिता, पत्नी, पुत्र, भाई आदि और नौकर, पड़ोसी, मित्र तथा गाय, भैंस, घोड़े आदि भी तीन प्रकार के (शत्रु, मित्र और उदासीन) होते हैं। इन सबके साथ हमारा सम्बन्ध ऋणानुबन्ध से ही होता है।'

'प्रियतम ! जिस मनुष्य को जितना धन मिलता है, उसको बिना परिश्रम किये ही उतना धन मिल जाता है और जब धन जाने का समय आता है, तब कितनी ही रक्षा करने पर भी वह चला जाता है-ऐसा समझकर आपको धन की चिन्ता नहीं करनी चाहिये। **वास्तव में धर्म के पालन से ही पुत्र और धन की प्राप्ति होती है।** धर्म का आचरण करने वाले मनुष्य ही संसार में सुख पाते हैं। इसलिये आप धर्म का अनुष्ठान करें। जो मनुष्य मन, वाणी और शरीर से धर्म का आचरण करता है, उसके लिये संसार में कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं रहती।' ऐसा कहने के बाद सुमना ने विस्तार से धर्म का स्वरूप तथा उसके अंगों का वर्णन किया।

उसको सुनकर सोमशर्मा ने प्रश्न किया कि तुम्हें इन सब गहरी बातों का ज्ञान कैसे हुआ? सुमना ने कहा-'आप जानते ही हैं कि मेरे पिताजी धर्मात्मा और शास्त्रों के तत्त्व को जानने वाले थे, जिससे साधु लोग भी उनका आदर किया करते थे। वे खुद भी अच्छे-अच्छे सन्तों के पास जाया करते तथा सत्संग किया करते थे। मैं उनकी एक ही बेटी होने के कारण वे मेरे पर बड़ा स्नेह रखा करते तथा अपने साथ मुझे भी सत्संग में ले जाया करते थे।

इस प्रकार सत्संग के प्रभाव से मुझे भी धर्म के तत्त्व का ज्ञान हो गया।' यह सब सुनकर सोमशर्मा ने पुत्र की प्राप्ति का उपाय पूछा। सुमना ने कहा कि 'आप महामुनि वसिष्ठजी के पास जायँ और उनसे प्रार्थना करें। उनकी कृपा से आपको गुणवान् पुत्र की प्राप्ति हो सकती है।' पत्नी के ऐसा कहने पर सोमशर्मा वसिष्ठजी के पास गये। उन्होंने वसिष्ठजी से पूछा कि 'किस पाप के कारण मुझे पुत्र और धन के अभाव का कष्ट भोगना पड़ रहा है?'

वसिष्ठजी ने कहा-'पूर्वजन्म में तुम बड़े लोभी थे तथा दूसरों के साथ सदा द्वेष रखते थे। तुमने कभी तीर्थयात्रा, देवपूजन, दान आदि शुभकर्म नहीं किये। धन ही तुम्हारा सब कुछ था। तुमने धर्म को छोड़कर धन का ही आश्रय ले रखा था। तुम रात-दिन धन की ही चिन्ता

में लगे रहते थे। तुम्हें अरबों-खरबों स्वर्णमुद्राएँ प्राप्त हो गयीं, फिर भी तुम्हारी तृष्णा कम नहीं हुई, प्रत्युत बढ़ती ही रही। **तुमने जीवन में जितना धन कमाया, वह सब जमीन में गाड़ दिया।** स्त्री और पुत्र पूछते ही रह गये; किंतु तुमने उनको न तो धन दिया और न धन का पता ही बताया। धन के लोभ में आकर तुमने पुत्र का स्नेह भी छोड़ दिया। इन्हीं कर्मों के कारण तुम इस जन्म में दरिद्र और पुत्रहीन हुए हो। हाँ, एक बार तुमने घर पर अतिथि रूप से आये हुए एक विष्णु भक्त और धर्मात्मा की प्रसन्नतापूर्वक सेवा की। उनके साथ तुमने अपनी स्त्री सहित भगवान् विष्णु का पूजन भी किया। इस कारण तुम्हें उत्तम वंश में जन्म मिला है। विप्रवर ! उत्तम स्त्री, पुत्र, कुल, राज्य, सुख, मोक्ष आदि दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति भगवान् विष्णु की कृपा से ही होती है।

अतः तुम भगवान् विष्णु की ही शरण में जाओ और उन्हीं का भजन करो।' वसिष्ठजी के द्वारा इस प्रकार समझाये जाने पर सोमशर्मा अपनी स्त्री सुमना के साथ बड़ी तत्परता से भगवान् के भजन में लग गये। उठते, बैठते, चलते, सोते आदि सब समय में उनकी दृष्टि भगवान् की तरफ ही रहने लगी। बड़े-बड़े विघ्न आने पर भी वे अपने साधन से विचलित नहीं हुए। इस प्रकार उनकी लगन को देखकर भगवान् उनके सामने प्रकट हो गये। भगवान् के वरदान से उनको मनुष्य लोक के उत्तम भोगों की और भगवद्भक्त तथा धर्मात्मा पुत्र की प्राप्ति हो गयी।

सोमशर्मा के पुत्र का नाम सुव्रत था। सुव्रत बचपन से ही भगवान् का अनन्य भक्त था। खेल खेलते समय भी उसका मन भगवान् विष्णु के ध्यान में लगा रहता था। जब माता सुमना उससे कहती कि 'बेटा ! तुझे भूख लगी होगी, कुछ खा ले तब वह कहता कि माँ भगवान् का ध्यान महान् अमृत के समान है, मैं तो उसी से तृप्त रहता हूँ !' जब उसके सामने मिठाई आती तो वह उसको भगवान् के ही अर्पण कर देता और कहता कि इस अन्न से भगवान् तृप्त हों। जब वह सोने लगता, तब भगवान् का चिन्तन करते हुए कहता कि 'मैं योगनिद्रा परायण भगवान् विष्णु की शरण लेता हूँ। इस प्रकार भोजन करते, वस्त्र पहनते, बैठते और सोते समय भी वह भगवान् के चिन्तन में लगा रहता और सब वस्तुओं को भगवान् के अर्पण करता रहता।

युवावस्था आने पर भी वह भोगों में आसक्त नहीं हुआ, प्रत्युत भोगों का त्याग करके सर्वथा भगवान् के भजन में ही लग गया। उसकी ऐसी भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु उसके सामने प्रकट हो गये। भगवान् ने उससे वर माँगने के लिये कहा तो वह बोला-'श्री विष्णु ! अगर आप मेरे पर प्रसन्न हैं तो मेरे माता-पिता को सशरीर अपने परमधाम में पहुँचा दें और मेरे साथ मेरी पत्नी को भी अपने लोक में ले चलें। भगवान् ने सुव्रत की भक्ति से संतुष्ट होकर उसको उत्तम वरदान दे दिया। इस प्रकार पुत्र की भक्ति के प्रभाव से सोमशर्मा और सुमना भी भगवद्धाम को प्राप्त हो गये।

इस कथा में विशेष बात यह आयी है कि संसार में किसी का ऋण चुकाने के लिये और किसी से ऋण वसूल करने के लिये ही जन्म होता है; क्योंकि जीव ने अनेक लोगों से लिया है और अनेक लोगों को दिया है। लेन-देन का यह व्यवहार अनेक जन्मों से चला आ रहा है और इसको बंद किये बिना जन्म-मरण से छुटकारा नहीं मिल सकता। और इसका उपाय तो समर्थ सद्गुरु की शरण ही है।

संसार में जिनसे हमारा सम्बन्ध होता है, वे माता, पिता, स्त्री, पुत्र तथा पशु-पक्षी आदि सब लेन-देन के लिये ही आये हैं। अतः मनुष्य को चाहिये कि वह उनमें मोह-ममता न करके अपने कर्तव्य का पालन करे अर्थात् उनकी सेवा करे, उन्हें यथा शक्ति सुख पहुँचाये। यहाँ यह शंका हो सकती है कि अगर हम दूसरे के साथ शत्रुता का बर्ताव करते हैं तो इसका दोष हमें क्यों लगता है; क्योंकि हम तो ऐसा व्यवहार पूर्वजन्म के ऋणानुबन्ध से ही करते हैं ? इसका समाधान यह है कि मनुष्य शरीर विवेक प्रधान है।

अतः अपने विवेक को महत्त्व देकर हमारे साथ बुरा व्यवहार करने वाले को हम माफ कर सकते हैं और बदले में उससे अच्छा व्यवहार कर सकते हैं। मनुष्य शरीर बदला लेने के लिये नहीं है, प्रत्युत जन्म-मरण से सदा के लिये मुक्त होने के लिये है। अगर हम पूर्वजन्म के ऋणानुबन्ध से लेन-देन का व्यवहार करते रहेंगे तो हम कभी जन्म-मरण से मुक्त हो ही नहीं सकेंगे।

लेनदेन के इस व्यवहार को बंद करने का उपाय है-निरूस्वार्थ भाव से दूसरों के हित के लिये कर्म करना। दूसरों के हित के लिये कर्म करने से पुराना ऋण समाप्त हो जाता है और बदले में कुछ न चाहने से नया ऋण उत्पन्न नहीं होता। इस प्रकार ऋण से मुक्त होने पर मनुष्य जन्म-मरण से छूट जाता है। अगर मनुष्य भक्त सुव्रत की तरह सब प्रकार से भगवान् के ही भजन में लग जाय तो उसके सभी ऋण समाप्त हो जाते हैं अर्थात् वह किसी का भी ऋणी नहीं रहता।' भगवद् भजन के प्रभाव से वह सभी ऋणों से मुक्त होकर सदा के लिये जन्म- मरण के चक्र से छूट जाता है और भगवान् के परमधाम को प्राप्त हो जाता है।

परम सद्गुरुदेव सियाग ने मनुष्य मात्र को जन्म मरण के चक्र से मुक्त करने के लिए संजीवनी मंत्र की आराधना बताई है। इस आराधना से ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास संभव है।

"मेरे लिए तो 'गुरु' ही सर्वोपरि है।"

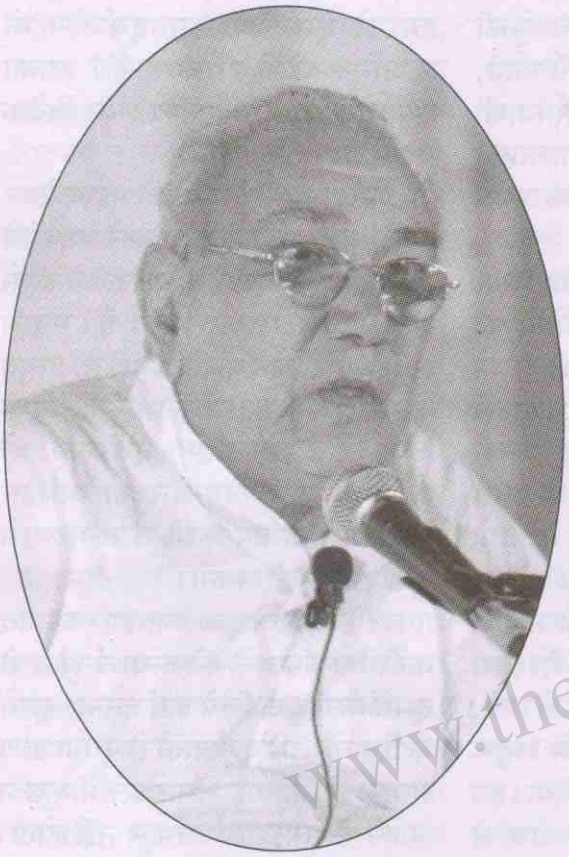

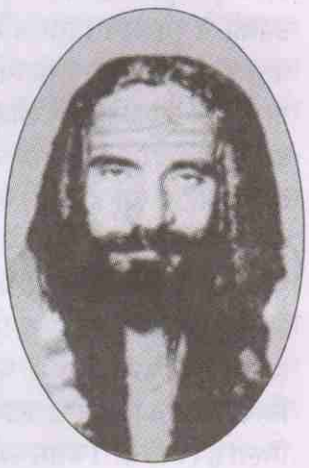

कुण्डलिनी जाग्रत होकर सहस्रार में पहुँच जाती है, उसी का नाम 'मोक्ष' है। इसमें तीन बंध लगते हैं। मूलाधार (Sacrem) में साढ़े तीन आंटे (फेरे) लगाकर, कुण्डलिनी सुषुप्त अवस्था में रहती है। गुरु कृपा से ही कुण्डलिनी जाग्रत होती है। योग में 5 प्रकार के वायु होते हैं-प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान। आजकल जितने भी गुरु हैं, उनका कोई गुरु नहीं है। वे अपने गुरु को साथ नहीं रखते। मैं अपने गुरु को हमेशा साथ रखता हूँ (दादा गुरुदेव के चित्र की ओर इशारा करते हुए), मेरे फोटो के साथ हमेशा मेरे गुरुदेव का फोटो रह ता है। **मेरे अंदर जो परिवर्तन आया, मेरे गुरु की कृपा से आया है।** मेरे गुरुदेव शिव के अवतार है। यहाँ (आज्ञाचक्र) पर गुरु का ध्यान करते हैं। मेरे लिए तो 'गुरु' ही सर्वोपरि है। मेरी तस्वीर से ध्यान लगता है, राम और कृष्ण की तस्वीर से ध्यान नहीं लगता।

गुरु कब प्रसन्न होता है?

गुरु, धन-दौलत देने या चढ़ावा चढ़ाने से प्रसन्न नहीं होता-**बल्कि साधक जब आराधना में आगे बढ़ता है तो गुरु प्रसन्न होता है।**

धन-दौलत, रुपया-पैसा सब कुछ यहीं रह जाता है, केवल आराधना ही साथ में रहती हैं, आराधना ही साथ जाती है। अब यहाँ (आज्ञाचक्र) पर मुझे देखो और 15 मिनट ध्यान करो। मेरी तस्वीर से ही ध्यान लगता है।

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग
रविवार 3 जून 2012

www.the-comforter.org

रोहट (पाली)-वरिष्ठ अध्यापक प्रशिक्षण शिविर में गुरुदेव सियाग सिद्धयोग-शक्तिपात दीक्षा कार्यक्रम आयोजित। (19 मई 2018)

कुण्डलिनी जनित यौगिक क्रियाओं की विभिन्न मुद्राओं में साधक

।। ॐ श्री गंगाईनाथाय नमः ।।

गुरुदेव के चरण कमल ही सर्वोत्तम तीर्थ है।

गुरुभावः परं तीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ।
सर्वतीर्थमयं देवि श्रीगुरोश्चरणाम्बुजम् ।।
गुरु गीता 159

अनुवाद : गुरुभक्ति ही सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है।
अन्य तीर्थ निरर्थक हैं। हे देवी! गुरुदेव के चरण कमल सर्वतीर्थमय हैं।

www.the-comforter.org

गले के गाँठ की पीड़ा ठीक होना व तामसिक शक्तियों से छुटकारा

सर्व प्रथम गुरुदेव व दादा गुरुदेव को बार-बार प्रणाम करती हूँ। मेरी शादी के बाद में मैं दुःखी जीवन जी रही थी, कई दिनों तक बीमार रहती थी, हाथ-पाँव दर्द करना, बुखार आना, कभी चिल्लाना, हाथ-पैर पटकना आदि। इसी तरह कई साल बीत गये कभी रामदेवरा की पैदल यात्रा तो कभी जसोल, वहा पर रात्रि जागरण करते तो भी कुछ फर्क नहीं पड़ा। मैंने गुरुदेव से सन् 1994 में दीक्षा ली थी। उस समय, मैं गुरुदेव का ध्यान नहीं करती थी। मेरे पति कहते रहते थे कि गुरुदेव का ध्यान करो परन्तु मैं ध्यान नहीं करती थी। उपर्युक्त सारे प्रपंच करने पर भी जब ठीक नहीं हुई और मेरे गले में एक गाँठ हो गई जो बहुत दर्द करती थी।

मेरे पति ने कहा अब अस्पताल चल के जाँच करवाते हैं तो मैंने कहा अस्पताल में नहीं चलुँगी, गाँठ को काटेंगे। तब मैं और मेरा पति जोधपुर आश्रम में गये। गुरुदेव को गाँठ दिखाई, गुरुदेव ने कहा ''यह गाँठ कैंसर की है, कहीं भी ठीक नहीं होगी। मेरी तस्वीर का ध्यान कर ठीक हो जावोगी।'' तब 2004 से मैं नियमित गुरुदेव का ध्यान करती हूँ, तब से बिलकुल ठीक हूँ। गाँठ का दर्द भी मिट गया है। गुरुदेव के नाम जप व ध्यान से सभी तरह की तामसिक शक्तियाँ शांत हो गई।

मेरा जीवन सुधर गया, अब मैं सुखमय जीवन जी रही हूँ। सुबह-शाम दोनों समय ध्यान करती हूँ। मेरा तो इतना ही कहना है कि सभी लोग गुरु भगवान का ध्यान करो, सुखी जीवन जीयो.....

मोहनी पत्नी श्री माधुराम
आगोलाई, जोधपुर(राज.)

आगामी कार्यक्रम संबंधी सूचना

जोधपुर आश्रम

समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग के '' महाप्रयाण दिवस'' पर जोधपुर आश्रम में मंगलवार, 5 जून 2018, सुबह 10.30 बजे, सद्गुरुदेव की दिव्य वाणी में संजीवनी मंत्र के साथ सामूहिक ध्यान होगा। सद्गुरुदेव के पावन चरण कमलों में यही प्रार्थना है कि सिद्धयोग दर्शन का ज्ञान पूरे विश्व में फैलें। पिछले वर्ष निर्जला एकादशी, सोमवार, 5 जून, 2017 को पूज्य सद्गुरुदेव, भौतिक देह त्याग कर अनंत में विलीन हो गए थे, लेकिन सद्गुरुदेव की आध्यात्मिक शक्ति सदा हमारे साथ है।

जयपुर

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस
21 जून 2018
को शाम -7 से 8 बजे तक
स्थलः- करणी पैलेस,
वैशाली नगर, जयपुर
में सिद्धयोग शिविर
आयोजित होगा।
संपर्कः-9252327213

कलाऊ आश्रम

प्रत्येक गुरुवार सायं 7 से 8 बजे तक सामूहिक ध्यान कार्यक्रम होगा।
संपर्कः-9784742587

मुम्बई

Avsk वसई आश्रम में
5 जून 2018
को शाम -5.00 बजे से
सामूहिक ध्यान कार्यक्रम होगा।
संपर्कः-9322512322

हैदराबाद

5 जून 2018
को शाम -8 बजे सामूहिक ध्यान कार्यक्रम होगा।
संपर्कः-09440840374

समस्त जिज्ञासु साधक गण सादर आमंत्रित हैं।

www.the-comforter.org

सिद्धयोग द्वारा अद्भुत साहित्य सृजन

पद्य भाग में दुनिया का वास्तविक चित्रण

तामसिकता की चंचल किरणें, खेल रही है जल-थल में।

तामसिकता की चंचल किरणें, खेल रही है जल थल में।
चहुँ दिशा में घूम रही है, धरती और अनंत में।।
निडर होकर निवास कर रही है, मानव रूपी महल में।
तामस उगल रहा है धुंआ, मनुष्य रूपी चिमनी में।।
घर-घर माताएँ रोने वाली, सुनसान रात बड़ी अंधेरे वाली।
मुँह दिखाने रहे ना घर-घर वासी,
सब ने आपस में खाई गाली।।
मानव मानव पर घात करता है, तामस रूपी कांटों से।
सांप सांप को डसता है, अपनी जिह्वाओं से।।
स्वयं को जलाने का प्रयास करता है, धधकते अंगारों से।
तमोगुण की चंचल किरणें, लड़ रही है तमोगुण से।।
अरे ! दिग्गजों जाओ, अपनों को बड़ा बताने वालों।
बड़े-बड़े निर्णय लेकर, शांति मिटाने वालों।।
अरे ! नेताओं, अपनों को बड़ा बताने वालों।
अपने हाथों से किसी की, रोटी हड़पने वालों।।
यह वही सुंदर धरती, आग के अंगारों से भरी है।
अरे ! मानवता तो, यहाँ मरी हुई पड़ी है।।
पीते हैं धवल दूध, नाग विश डंक मारने को।
अपने ही संतों पर, पाप का हाथ उठाने को।।
अरे ! भोले-भाले बच्चों के, छुरा घोंपने वालों।
सबकी सुख-शांति को, पलभर में हड़पने वालों।।
फालतू डींगे मत हांको, तामस के मर्दानों।
अपने घर में दुबके रहो, निशाचरी के पुत्रों।।
लहराती फसल पर, पाला पड़ रहा है।
फलते-फूलते मानव को, तामस जकड़ रहा है।।
अन्याई अपने गढ़ को, मजबूत कर रहा है।
सब तरह अत्याचार ही, अत्याचार फैल रहा है।।
धर्म को मिटा रहा है, धार्मिक कहलाने वाला।
तामस से जूंझ रहा है, हर सांस लेने वाला।।
दूर बैठकर देख रहा है, घर को आग लगाने वाला।
अपने ही हाथों, अपने वतन को लूटने वाला।।
महामारी सब को जकड़ रही है,
भूख भूख सबको पकड़ रही है।
अकाल सब पर कड़क रहा है, तो भी मानव अकड़ रहा है।।
वन उपवन जल रहे हैं, पेड़ सभी आज कट रहे हैं।
महलों की दीवारें टूट रही है, मानव की बुद्धि फूट रही है।।
तूफानों से झोपड़ियों के, छप्पर उड़ रहे हैं।
भूखे गरीबों के, बर्तन बज रहे हैं।।
मानवीयता का तन मन, मैला हो रहा है।
धनवानों का धन भी, हिंसक आज हो रहा है।।
एक भाई कहता है, अपनी भूमि का हक लूंगा।
दूसरा भाई कहता है, एक पांव भी नहीं टिकने दूंगा।।
भाई पर भाई, हाथ से तलवार चलाता है।
नश्वर शरीर के लिए, सारहीन होकर लड़ता है।।
एक ही गगन में, पक्षी आपस में लड़ते हैं।
ले लिया मेरा आसमां, यह कह कर झगड़ते हैं।।
एक एक दाने पर, है खाने वालों का नाम।
लेने वाले हजारों हैं, देने वाला तो एक राम।।
तो भी भगवान् के घर, पाखण्ड खोट चल रहा है।
पूजा अर्चना के लिए भी, पैसा व नोट चल रहा है।।
महलों में रहने वाले, मन के काले होते हैं।
जीते जी मरण मुख में, पहुंचे हुए ही होते हैं।।
स्वार्थ के लिए, काला मुँह भी कर लेते हैं।
यह निशाचर प्रकाश से, बहुत डरा करते हैं।।
उल्लू की तरह, अंधेरे में रहने वाले।
खाते हैं, उसी थाली को, छेद कर फोड़ने वाले।।
यह नर होते हैं, तामस के मतवाले।
दुर्योधन रावण की तरह, कभी न सुधरने वाले।।

-तरंजन भादु, बलदेव नगर, बाड़मेर

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

गुरुदेव के दिव्य दर्शन

गुरुदेव ने मुझे 24 नवम्बर 2016 को रात्रि में तकरीबन 4:10 बजे ध्यान के समय मुझे दर्शन दिये और मेरे पास आकर मेरे साथ खेलने लगे, काफी देर तक खेलते रहे तथा कहने लगे कि अनादि काल में भी सनातन धर्म ही था और अब भी सनातन धर्म ही रहेगा।

कलियुग के गुण धर्म के कारण सभी धर्मों का बोल-बाला होता गया तथा आध्यात्मिकता का धीरे-धीरे पतन होता गया। मैं मानवता में सतोगुण का उत्थान और तमोगुण का पतन करने आया हूँ।

मेरे प्यारे भाइयों और बहनों अपार हर्ष की बात तो यह है कि कलियुग में 'कल्कि' भगवान् अवतार ले चुके हैं, आपको पता होना चाहिए कि 'कल्कि' भगवान् का अवतरण बीकानेर जिले के पलाना ग्राम में 24 नवम्बर 1926 को हो चुका है।

उन्होंने युग परिवर्तन करने की लीला आरम्भ कर दी है।

26 नवम्बर 2016 को प्रातः 6:00 बजे के लगभग जब मुझे ध्यानावस्था में पाँच या छः महिने का बालक दिखाई दिया। उस बालक का शरीर बड़ा ही सुडोल व सुन्दर आकृति का था। मेरे देखते-देखते उस बालक का शरीर बदल कर जामसर निवासी बाबा श्री गंगाईनाथ जी योगी के शरीर में परिवर्तित हो गया। फिर क्या था मेरा ध्यान भंग हो गया।

मैंने सोचा अब आगे क्या होगा, पता नहीं?

अब मैं सारे संसार वासियों को बताऊँगी और कहूँगी कि 'कल्कि' भगवान् प्रगट हो चुके हैं।

हमेशा खुश रहने से भगवान् के दर्शन होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।

'सुदर्शन -चक्र रूपी अमोघ अस्त्र से बचने की सामर्थ्य संसार की किसी भी शक्ति मे नहीं है। मैने मेरा कार्य आरम्भ कर दिया है। मैं भविष्यवाणी नहीं भविष्यवक्ता पैदा करने आया हूँ।'

देखो रे भाई प्रगटे हैं ''कल्कि''

कल्कि की तलवार चलेगी,
शरणागत् को बहाल करेगी।
पापी का सर्वनाश करेगी,
मानवता का दम्भ भरेगी।
सतोगुण का उत्थान करेगी,
तमोगुण का पतन करेगी।
मानुष को तैयार करेगी,
दिव्य देह में रूपान्तरण करेगी।
देखो रे भाई प्रगटे हैं ''कल्कि''
संजीवनी मंत्र का प्रचार करेगी,
विश्व का कल्याण करेगी।
भारत का पुनर्जन्म करेगी,
जीव-मात्र का कल्याण करेगी।
सिद्धयोग का प्रचार करेगी, मंत्र का शंखनाद करेगी।
सनातन पुरूष से मिलन करेगी,
फिर आत्मसाक्षात्कार करेगी।
देखो रे भाई प्रगटे हैं ''कल्कि''
शब्द की धारा बहेगी, मानवता रस पान करेगी।
आसुरी शक्तियों का शमन करेगी, ''कल्कि'' का प्रचार करेगी।
तब जा करके पार पड़ेगी, बीज मंत्र का प्रचार करेगी।
सतयुग का आरम्भ करेगी,
कलियुग का ये नाश करेगी।
देखो रे भाई प्रगटे है ''कल्कि''

आप सभी भाई-बहिन व मातायें गुरुदेव के आदेशानुसार अपने-अपने स्तर पर इस मिशन (सिद्धयोग) का प्रचार-प्रसार जीवन प्रर्यन्त करते रहेंगे। अनादिकाल से आज तक पहले के गुरुओं ने दीक्षा को केवल कान फूँकने तक ही सीमित रखा और दीक्षा ही दी है, शक्तिपात दीक्षा नहीं दी। क्योंकि शक्तिपात दीक्षा देने का सामर्थ्य किसी के पास न था।

परन्तु परम दयालु सद्गुरुदेव ने परम सत्ता से शक्तिपात का सामर्थ्य प्राप्त करके तथा शक्तिपात दीक्षा दे करके सिद्ध कर दिया और लाइव कर दिया।

गुरुदेव की आवाज तो चली गयी आकाश में, अब उसे कोई रोक नहीं सकता, गुरुदेव ने टी.वी. के माध्यम से आवाज को वायु मण्डल में फैला दिया। गुरुदेव ने वैदिक दर्शन को विश्व दर्शन बना ही दिया।

-कृष्णा सुमन
केशवपुरा, कोटा

www.the-comforter.org

मनुष्य और विकास

-श्री अरविन्द

मनुष्य एक संक्रमणकालीन, विकसनशील प्राणी है। वह अभी विकास के पथ पर है। अभी वह अंतिम विकास नहीं है। उसका और उच्चतम विकास अभी बाकी है। सृष्टि विकास से आज तक सर्वोच्च प्राणी के रूप में मनुष्य ही है लेकिन वह अभी अपूर्ण है। उसके कोशों के सर्वांगीण विकास के लिए हर युग में वह परम सत्ता अवतार ग्रहण कर मनुष्य के विकास सोपान में उत्तरोत्तर सीढ़ियाँ लगाकर, तद्रूप का निर्माण कर रही है।

लेकिन वह उसे धीरे-धीरे, जरा-जरा करके, ऊर्जा और पदार्थ की, प्राण और मन की सूक्ष्म अत्यणु बूंदों, पतली धारों, लघु स्पन्दनशील संग्रथन में मुक्त करती है मानो अस्तित्व के निश्चेतन उपादान के घने विघ्न में से, उसके मलिन अनिच्छुक माध्यम से वह इतना ही बाहर निकाल सकती है।

पहले-पहल वह अपने-आपको जड़तत्त्व के ऐसे रूपों में बसाती है जो एकदम से अचेतन मालूम होते हैं, तब वह जीवित जड़तत्त्व के वेश में मानसिकता की ओर हाथ-पैर मारती है और अपूर्ण रूप से उसे सचेतन पशु में पा लेती है। पहले यह चेतना प्रारम्भिक, अधिकतर अर्द्ध-अवचेतन या बस सचेतन सहज वृत्ति होती है। वह धीरे-धीरे विकसित होती है और सजीव जड़-भौतिक के अधिक संगठित रूपों में वह अपनी समझ की पराकाष्ठा तक जा पहुँचती है और मनुष्य, विचारशील पशु में अपना भी अतिक्रमण करती है।

मनुष्य तर्कशील मनोमय सत्ता में विकसित होता है लेकिन अपने उच्चतम उत्कर्ष में भी मूल पशुत्व का सांचा, शरीर की निश्चेतना का दुर्वह भार, आरंभ के तमस् और निर्ज्ञान की ओर गुरुत्वाकर्षण का अधोमुख दबाव, उनके सचेतन विकास पर निश्चेतन जड़-भौतिक प्रकृति का नियंत्रण, उसकी सीमांकन की शक्ति, उसके कठिन विकास का विधान, उसकी गतिरोध और विफलीकरण की अपरिमित शक्ति को अपने साथ लिये रहता है। आद्य निश्चेतना का उसमें से उभरनेवाली चेतना पर यह नियंत्रण ऐसी मानसिकता का सामान्य रूप ले लेता है, जो ज्ञान की ओर हाथ-पैर तो मार रही है लेकिन अपने-आप आधारभूत प्रतीत होनेवाली प्रकृति में अज्ञान ही है।

इस बाधा और भार के नीचे दबे मानसिक मनुष्य को अभी अपने अंदर से पूरी तरह सचेतन सत्ता को, दिव्य मानवता या आध्यात्मिक और अतिमानसिक, अतिमानसता को विकसित करना है जो विकास का अगला उत्पादन होगा। वह संक्रमण अज्ञान में होते हुए विकास से ज्ञान में होनेवाले महत्तर विकास की ओर जाने का चिह्न होगा। वह अब अज्ञान और निश्चेतना के अंधकार में न होकर अतिचेतन के प्रकाश में प्रतिष्ठित और अग्रसर होगा।

जड़ से मन तक और उसके भी परे के इस पार्थिव विकास की प्रकृति की क्रिया की दोहरी प्रक्रिया होती है। एक भौतिक विकास की बाहरी दृश्य प्रक्रिया है, जिसका यंत्र है जन्म-क्योंकि विकसित शारीरिक रूप को, जो चेतना की अपनी-अपनी विकसित शक्ति का आवास होता है, वंश-परम्परा द्वारा सुरक्षित और अविच्छिन्न रखा जाता है। साथ की आंतरात्मिक विकास की एक अदृश्य प्रक्रिया चलती है जिसका यंत्र है रूप और चेतना की आरोहणकारी श्रेणियों में पुनर्जन्म। अपने आपमें पहली प्रक्रिया का अर्थ होगा केवल वैश्व विकास, क्योंकि व्यष्टि जल्दी-जल्दी नष्ट होने वाला उपकरण होगा और जाति, एक अधिक टिकाऊ सामूहिक रूपायन ही, वैश्व निवासी, वैश्व आत्मा की उत्तरोत्तर अभिव्यक्ति में वास्तविक चरण होगा।

पार्थिव जीवन में व्यष्टि-सत्ता के लम्बे समय तक निवास करने और विकास के लिये पुनर्जन्म अनिवार्य शर्त है।

वैश्व अभिव्यक्ति का प्रत्येक सोपान, आकार का प्रत्येक प्रारूप जो अंदर निवास करनेवाले अध्यात्म पुरुष को स्थान दे सकता है, वह पुनर्जन्म द्वारा व्यष्टिगत अंतरात्मा, चैत्य सत्ता के एक ऐसे साधन में बदल जाता है जिससे वह अपनी छिपी हुई चेतना को अधिकाधिक व्यक्त कर सके।

प्रत्येक जीवन जड़-भौतिक पर विजय पाने में एक चरण बन जाता है और यह विजय उसके अंदर चेतना की अधिकाधिक प्रगति द्वारा आ सकती है जिससे अंततः जड़तत्त्व भी अध्यात्म पुरुष की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिये साधन बन जायेगा।

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

गतांक से आगे....

योग के बारे में

-महर्षि श्री अरविन्द

मनुष्य ईश्वर की सर्वोच्च कृति है। इस शरीर रूपी सुन्दर ग्रन्थ को पढ़ने के लिए, अपने जीवन की असंख्य समस्याओं व कष्टों से मुक्ति पाने के लिए, भारतीय सिद्धयोग दर्शन को अंगीकार करना परमावश्यक है। **समर्थ सद्गुरुदेव सियाग** ने मानव मात्र के कल्याण के लिए सिद्धयोग दर्शन को मानव मात्र में मूर्तरूप देकर समझाया है। योग से मनुष्य को अपने निज स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। इसी संबंध में महर्षि श्री अरविन्द ने अपनी पुस्तक-**'मानव से अतिमानव'** में विस्तार से समझाया है। साधकों के ज्ञान बोध के लिए ये शीर्षक यहाँ वर्णित किया जा रहा है।

तत् ही अज्ञात भगवान् है जिसके लिये कोई वेदी नहीं बनायी जा सकती, कोई पूजा नहीं की जा सकती है। विश्व उसकी एकमात्र वेदी है, जीवन एकमात्र पूजा है। हम हैं, अनुभव करते हैं, सोचते, कार्य करते हैं या हैं तो पर अनुभव नहीं करते, सोचते नहीं, कार्य नहीं करते, यह तत् के लिये पर्याप्त नहीं है। **उस तत् के लिये सन्त और पापी समान हैं,** क्रियाशीलता और निष्क्रियता, मनुष्य और केंचुआ (मोलस्क) समान है क्योंकि सभी समान रूप से उसकी अभिव्यक्तियाँ हैं।

ये चीजें कम-से-कम परब्रह्म या पर पुरुष के रंग हैं, जो निरपेक्ष के निकटतम है और जो कुछ हम जानते हैं उसमें उच्चतम है लेकिन पर्दे के पीछे वह तत् क्या है और कैसा है और वह अपने-आपको या अपनी अभिव्यक्ति को किस रूप में देखता है? यह ऐसी चीज है जिसे कोई मन कह या जान नहीं सकता। वह समान रूप से अज्ञानी और धृष्ट है जो उसके लिये वेदी खड़ी करता या निवेदित करता है या उन लोगों के आगे जो यह जानते हैं कि वे उसे नहीं जान सकते, उस अज्ञात की घोषणा करने का ढ़ोंग करता है। विचार को उलझन में डालो, मनुष्य की अन्तरात्मा को उसके प्रगतिशील अभियान में हक्का-बक्का न करो। उसकी जगह विश्व की ओर मुड़ो और तत् को इसी में जानो। तद्वा एतत् क्योंकि जो लोग विश्व में हैं उनके द्वारा ज्ञात होने के लिये उसने अपने-आपको इसी तरह, इसी रूप में रखा है। अज्ञान से धोखा मत खा, ज्ञान से धोखा मत खा, न कोई बद्ध है न कोई मुक्त और न कोई मुक्ति की खोज में है। केवल भगवान् ही अपनी आत्म-सचेतन सत्ता की विस्तृत महानता में जिसे हम विश्व कहते हैं, इन चीजों का खेल खेल रहे हैं।

परा माया महिमानमस्य।

हमारे योग का उद्देश्य

हमारे योग का उद्देश्य है आत्म-सिद्धि, आत्मविलोपन नहीं।

योगी के चरणों के लिये दो मार्ग हैं, विश्व से किनारा करना या विश्व में पूर्णता पाना। पहला आता है संन्यास से, **दूसरा सिद्ध होता है तपस्या से।** पहला हमारा स्वागत करता है जब हम सत्ता में भगवान् को खो देते हैं और दूसरा तब सिद्ध होता है जब हम भगवान् में सत्ता को सिद्ध कर लेते हैं। हमारा मार्ग पूर्णता का पथ हो, त्याग का नहीं, हमारा लक्ष्य युद्ध में विजय हो, संग्राम से पलायन नहीं।

बुद्ध और शंकर ने जगत् को मूलतः मिथ्या और दुख-दैन्य से भरा माना, अतः उनके लिये संसार से पलायन ही एकमात्र बुद्धिमता थी। लेकिन यह जगत् ब्रह्म है, जगत् भगवान् है, जगत् सत्य है, जगत् आनंद है। मन के अहंकार द्वारा दुनिया को गलत समझना मिथ्यात्व है और जगत् में भगवान् के साथ हमारा गलत संबंध ही दुःख-दैन्य है। और कोई मिथ्यात्व नहीं है, दुःख का और कोई कारण नहीं है।

भगवान् ने अपने अंदर माया द्वारा जगत् की रचना की लेकिन माया का वैदिक अर्थ भ्रांति नहीं है। वह तो प्रज्ञा, ज्ञान, क्षमता, चेतना में विस्तार-प्रज्ञा प्रसृता पुराणी है। सर्वशक्तिमान् प्रज्ञा ने जगत् की रचना की है। यह किसी **अनन्त स्वप्नद्रष्टा** की व्यवस्थित बड़ी भूल नहीं है। सर्वज्ञ शक्ति जगत् को अपने अंदर या अपने आनंद में अभिव्यक्त करती या छिपा लेती है। यह मुक्त निरपेक्ष ब्रह्म पर स्वयं उसके अज्ञान द्वारा आरोपित दासता नहीं है।

सार तत्त्व यही है कि सद्गुरु शरणागत होकर सिद्धयोग की साधना में लगे रहना ही शिष्य के लिए श्रेयष्कर है।

संदर्भ-श्री अरविन्द,
'मानव से
अतिमानव की ओर'

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

सद्गुरुदेव के दिव्य शब्द

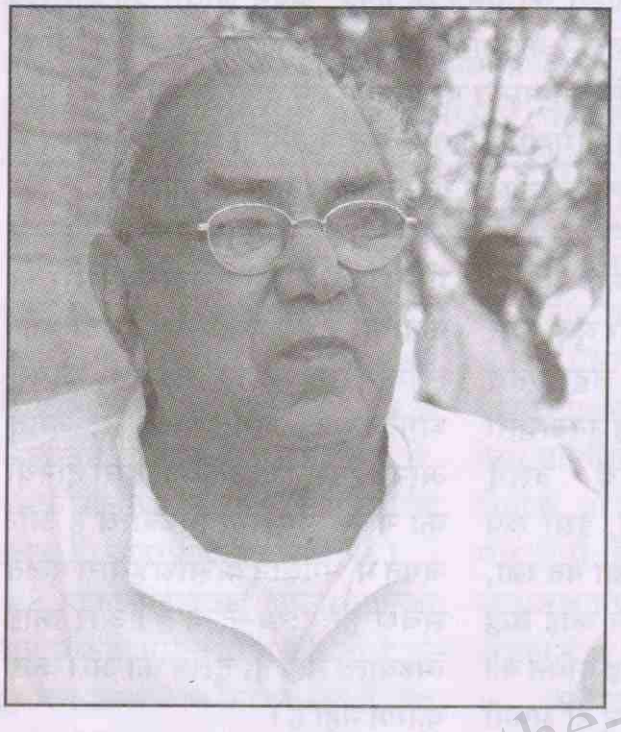

''आध्यात्मिक जगत् के लोग, धर्म के नाम पर केवल अतीत के गुणगान मात्र करके इति श्री कर रहे हैं जबकि हमारे दर्शन के अनुसार ईश्वर प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार का विषय है, कथा प्रवचन का नहीं।

''जब तक इस ज्ञान (वैदिक दर्शन) को कैद से मुक्त करके, मनुष्य शरीर रूपी प्रयोगशाला में प्रमाणित नहीं किया जाएगा, सार्थक जीवन बिताना असंभव है।''

-सद्गुरुदेव सियाग

www.the-comforter.org

JULY

Appointments

ॐ श्रीगंगाई नाथाय नमः ॐ श्रीगंगाई नाथाय नमः

"कैंसर"?

20-3-1943:- कैंसर से पीड़ित एक साधक की आश्रम में मृत्यु हो गई। एक शिष्य ने माताजी से पूछा क्या इस रोगी को ठीक किया जा सकता था? लोगों की धारणा है कि कैंसर असाध्य है। आश्रम में कैंसर का यह "पहला" आक्रमण था। उन दिनों वे एक बड़े फ्रेंच विशेषज्ञ रोगी को देखने आये थे। उन्होंने माताजी के साथ इस रोगी के बारे में बड़े विस्तार से बात-चीत की और विज्ञान उस समय तक जितना जानता था सब बताया।

यह सब सुनने के बाद माताजी ने कहा:-

"डाक्टर की बातें सुनकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि "कैंसर" "सचमुच रोग नहीं है।" जब शरीर के कोषाणु "केन्द्रीय-चेतना" के विरुद्ध विद्रोह कर देते हैं तो उसे "कैंसर" कहा जाता है। इसका "सच्चा इलाज" यही होगा कि उन विद्रोही कोषाणुओं को "चेतन बनाकर" केन्द्रीय चेतना के आधीन किया जाय।

गतांक से आगे....

अनुभव-प्रधान युग का आगमन

अतः, व्यक्ति का तथा संसार का, जिसका व्यक्ति सदस्य है, सत्य एवं विधान खोज निकालने के लिये, यह व्यक्तिप्रधान युग मानवजाति का मौलिक प्रयास है। परम सत्य को खोज निकालने के लिए, आत्मा को सत्य से साक्षात्कार करने के लिए जिस अनुभूति और जीवन के अनुभव की जरूरत है, उस अनुभव की शुरूआत हो चुकी है। आगामी मानव जाति दिव्य जीवन धारण करेगी, उस विषय पर श्री अरविन्द ने सविस्तार वर्णन किया है कि आत्मा के पोषण के लिए एक अनुभव प्रधान युग का आगमन हो रहा है जिसमें मनुष्य पूर्णता प्राप्त करेगा।

उनके पीछे से, पुराने तर्कात्मक बुद्धिवाद की अमान्यता से उत्पन्न रिक्तता में से, एक नवीन अंतर्बोधवाद का उदय हो रहा था जिसे अभी अपनी गतिदिशा एवं अपने स्वभाव का कोई स्पष्ट ज्ञान नहीं था और जो जीवन के रूपों तथा शक्तियों में से उस वस्तु की खोज कर रहा था जो जीवन के पीछे विद्यमान है और जो आत्मा के बंद किवाड़ों का कभी-कभी अनिश्चित-सा संस्पर्श भी प्राप्त कर लेता है।

संसार की कला, संगीत एवं साहित्य में भी, जो सदा ही युग की प्राणिक प्रवृत्तियों के निश्चित सूचक होते हैं, निरंतर गंभीरतर रूप धारण करते हुए अनुभववाद की दिशा में गंभीर क्रांति घटित हुई है। भूतकाल की महान् वस्तुवादी कला एवं साहित्य का नवीन युग के मन पर अब वह प्रभाव नहीं रह गया है।

जिस प्रकार चिंतन में उसी प्रकार साहित्य में भी पहली प्रवृत्ति एक वृद्धिशील मनोवैज्ञानिक प्राणत्मवाद की थी जो मनुष्य की भावमय, सौंदर्यमूलक एवं प्राणमय वासनाओं तथा क्रिया-कलापों से उत्पन्न होकर उपरितल पर आती हुई अत्यंत सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रेरणाओं एवं प्रवृत्तियों के अंतरतम रूप का अभिव्यंजन करने का यत्न करती थी। ये सब कृतियाँ बड़ी चतुराई एवं सूक्ष्म रीति से निर्मित की गयी थीं, परंतु मनुष्य की सत्ता के विधान के विषय में किसी वास्तविक अंतर्दृष्टि से सर्वथा रहित थीं, ये हमारे उन उपरितलीय भावों, संवेदनों एवं कर्मों के उल्टी ओर के तल से परे कभी नहीं गयीं, जिनके सब अवयवों का इन्होंने सूक्ष्म रीति से अधिक गहराई में, पर बिना किसी विशाल या गंभीर ज्ञान की ज्योति की सहायता के विश्लेषण किया है।

ये कृतियाँ संभवतः अपेक्षाकृत तात्कालिक रूप में तो रोचक थीं, परंतु उस प्राचीन साहित्य की अपेक्षा, जिसका अपने विषय पर कम-से-कम एक दृढ़ एवं विशाल और शक्तिशाली आधिपत्य तो था, कला के रूप में साधारणतः घटिया थीं। प्रायः इनमें जीवन के स्वास्थ्य एवं सामर्थ्य की अपेक्षा जीवन की व्याधि का ही वर्णन मिलता था अथवा आत्माभिव्यंजन एवं आत्म-स्वामित्व की शक्ति की अपेक्षा जीवन की उग्र और अतएव अशक्त एवं अतृप्त वासनाओं की उच्छृंखलता एवं विद्रोह का ही निरूपण होता था।

इस आंदोलन ने रूस में अपनी चरम शक्ति का विकास किया। परंतु इधर इसका स्थान एक अधिक सच्ची मनोवैज्ञानिक कला, संगीत और साहित्य की प्रवृत्ति ने ले लिया जो प्राणमय की अपेक्षा मनोमय, अंतर्बोधमय एवं आंतरात्मिक अधिक थी। बाह्य प्राणात्मवाद से यह वस्तुतः उतनी ही दूर चली गयी थी जितनी कि इससे पूर्ववर्ती प्रवृत्तियाँ भूतकाल की वस्तुवादी मनोमयता से।

नवीन दार्शनिक अंतर्बोधवाद के समान इस नवीन आंदोलन का उद्देश्य भी अधिकतर बाह्य आवरणों को वास्तविक रूप से फाड़ फेंकना था, जो तत्त्व स्वयं प्रत्यक्षतया अभिव्यक्त नहीं होता उसको मानव-मन की पकड़ में लाना एवं पदार्थों की गुप्त आत्मा का संस्पर्श तथा उसमें प्रवेश प्राप्त करना था।

अधिकांश में यह आंदोलन अभी निर्बल था, अपने लक्ष्य पर इसका अधिकार वास्तविक नहीं था एवं अपने रूपों में अभी यह अपूर्ण ही था, परंतु **मानव-मन के अपने पुराने लंगर को छोड़ देने की ओर यह एक निश्चित आरंभिक पग अवश्य था,** एवं अन्वेषण की महत्त्वपूर्ण यात्रा में जिस दिशा की ओर मन को ले जाया जा रहा है, उसका निर्देशक भी था।

यह अन्वेषण अंदर की उस अभिनव सृष्टि का था जिसमें अंततः जीवन एवं समाज के अंदर बाह्य रूप में भी एक नवीन संसार का निर्माण होना है। कला और साहित्य भी, बौद्धिक एवं वस्तुवादी विधान एवं प्रकृति से हटकर, जिसे हम वस्तुओं का छिपा हुआ अंतर कह सकते हैं उसमें, अनुभवात्मक गवेषणा करने की ओर निश्चित प्रवृत्ति ग्रहण किये हुए प्रतीत होते हैं।

संदर्भ-श्री अरविन्द
'मानव-चक्र'
पुस्तक से

क्रमशः अगले अंक में...

सद्गुरुदेव के प्रति अनन्य श्रद्धा-भक्ति

आराधना के संबंध में शिष्य के लिए एक महान् सीख है-अतिप्राचीन काल से--"सद्गुरु कहे सो करे, सद्गुरु करे सो नहीं।"

(शिष्य के लिए सबसे हितकारी बात यही है कि अपने सद्गुरुदेव ने आराधना की जो विधि बताई है, सिर्फ वो ही करें, सद्गुरु ने क्या किया ? वैसा शिष्य को न करना और नहीं अपने मन में इस तरह की लालचा रखनी चाहिए।)

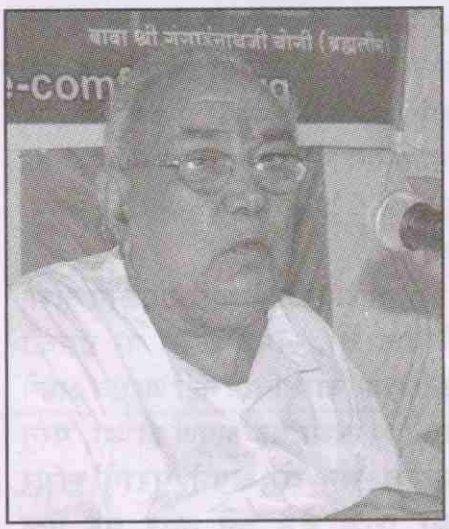

एक बार स्वामी शिवोमतीर्थ ने अपने सद्गुरुदेव स्वामी श्री विष्णुतीर्थ जी महाराज से अपने मन के भावों को व्यक्त करते हुए पूछ लिया-आपने यह अवस्था कैसे प्राप्त की ?

स्वामी विष्णुतीर्थ महाराज ने सहज जवाब दिया-"इसमें गुरु कृपा के अतिरिक्त भला और क्या कारण हो सकता है ? जो कुछ गुरुदेव ने कहा उस पर भरोसा करके ग्रहण कर लिया। जो साधन उन्होंने प्रदान किया, उसमें तत्परतापूर्वक लग गया।

जो कुछ उन्होंने छोड़ने के लिये कहा, उसे छोड़ दिया। जिस भाव में उन्होंने रहने के लिए कहा, मैंने उसी भाव में अपने आप को डुबो दिया। जो कुछ उन्होंने दिखाया उसे देख लिया, अन्य कुछ देखने की इच्छा ही नहीं की, बस यूं समझो कि जिधर गुरुजी ने लगाया; उधर लग गया। गुरु कृपा तभी फलीभूत होती है जब शिष्य में संपूर्ण समर्पण हो। समर्पण के बिना **अनन्य भक्ति** की कल्पना दिवास्वप्न मात्र है।

जब मैंने ऐसा किया तो अन्तर्गुरु प्रत्यक्ष होकर, उनकी अन्तर्कृपा प्रकट होने लगी। जन्म-जन्मान्तर के चित्त पर जमी मैल की चादर धुलने लगी। फिर मन की ऐसी स्थिति भी आई कि सिद्ध महापुरूषों का दर्शन लाभ भी प्राप्त होने लगा। **इसमें मेरा कोई पुरुषार्थ नहीं। जो कुछ है, सभी गुरु कृपा का ही फल है।** पुरुषार्थ का अभिमान साधन में विघ्न बनकर उपस्थित हो जाता है। साधक का यही कर्तव्य है कि गुरुदेव पर भरोसा रखें, तब गुरुदेव अन्तर में आकर बैठ जाते हैं। वही तो साधन करते हैं, रक्षा करते हैं, विघ्नों, संशयों, भ्रान्तियों, विकारों, संस्कारों आदि को हटाते हैं।

संदर्भ-स्वामी शिवोमतीर्थ, **'अंतिम रचना'** पुस्तक पृष्ठ-287

समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग ने साधक के सर्वांगीण विकास के लिए सिर्फ नाम (मंत्र) जप व ध्यान की आराधना बताई है। इसलिए साधक को सघन मंत्र जप व नियमित ध्यान करना चाहिए। सद्गुरुदेव ने जो कहा हैं-उस पर भरोसा होना चाहिए।

गतांक से आगे....

अहं से मुक्ति

''यदि हमें अपनी आत्मा पर से इस निम्नतर प्रकृति का प्रभुत्व मिटाना हो तो हमें शान्ति के उस अतल सागर में डुबकी लगानी होगी और वही बन जाना होगा।''

जीव इस साक्षात्कार से भी परे जा सकता है; आत्मा के विचारमात्र से विपरीत दिशा में यह शून्य ब्रह्म की ओर उठ सकता है, जिसमें यहाँ की सभी वस्तुओं का अभाव है एवं एक अनिर्वचनीय शान्ति है और जिसमें सब वस्तुओं का, **सत्** का भी, यहाँ तक कि उस सत् का भी **लय** हो जाता है जो व्यक्ति या विराट् के व्यक्ति का निर्व्यक्तिक आधार है। या फिर यह उसके साथ एक ऐसे अनिर्वचनीय ''तत्'' के रूप में ऐक्य लाभ कर सकता है जिसके सम्बन्ध में कुछ भी वर्णन नहीं किया जा सकता; क्योंकि यह विश्व और इसमें जो कुछ भी है वह सब 'तत्' में भी अस्तित्व नहीं रखता, बल्कि वह मन को एक स्वप्न जान पड़ता है।

स्वप्न भी ऐसा कि हमने आज तक जो भी स्वप्न देखे हैं या जो भी हमारी कल्पना में आये हैं, उन सबसे अधिक अवास्तविक, यहाँ तक कि **'स्वप्न'** शब्द भी इतना अधिक भावात्मक प्रतीत होता है कि यह उसकी पूर्ण अवास्तविकता को प्रकट नहीं कर सकता। ये अनुभव ही उदात्त मायावाद की आधारशिला हैं; जब मानव-मन अपने-आपको अतिक्रम कर ऊँचे-से-ऊँचे जाने के लिये उड़ान भरता है तो इन अनुभव के द्वारा मायावाद उस पर अत्यन्त दृढ़ता के साथ अधिकार जमा लेता है।

स्वप्न और माया के ये विचार तो ऐसे परिणाम मात्र हैं जो हमारी अब तक विद्यमान मानसिकता में जीव की नयी स्थिति के कारण उत्पन्न होते हैं। इनके उत्पन्न होने का एक और कारण यह है कि जीव के पुराने **मानसिक संस्कार**, और जीवन एवं सत्ता-सम्बन्धी इसका दृष्टिकोण इससे जो माँग करते हैं, उससे यह इन्कार कर देता है। वास्तव में, प्रकृति अपने लिये या अपनी ही गति के द्वारा कार्य नहीं करती, बल्कि आत्मा को प्रभु मानकर उसके लिये तथा उसके द्वारा कार्य करती है; क्योंकि उस **नीरवता** में से ही इस सब विराट् कर्म का प्रवाह फूटता है, वह **प्रतीयमान** शून्य अनुभवों के इन सब असीम ऐश्वर्यों को मानो गतिशील रूप में **निर्मुक्त** कर देता है। यह अनुभव पूर्णयोग के साधक को अवश्य प्राप्त करना होगा, किस विधि से प्राप्त करना होगा यह हम आगे चलकर बतायेंगे। (सघन मंत्र जप व नियमित ध्यान द्वारा) जब वह इस प्रकार विश्व पर अपना **प्रभुत्व** पुनः प्राप्त कर लेगा और पहले की तरह अपने-आपको जगत् में नहीं देखेगा, बल्कि जगत् को अपने-आप में देखने लगेगा, तब जीव की स्थिति क्या होगी? अथवा उसकी नयी चेतना में **अहं-भावना** का स्थान कौन चीज ले लेगी?

अहं-भावना रहेगी ही नहीं, यद्यपि व्यक्तिगत मन और देह में वैश्व चेतना की लीला के प्रयोजनों के लिये एक प्रकार का व्यष्टिकरण अवश्य रहेगा; कारण यह कि उसके लिये सब वस्तुएँ अविस्मरणीय रूप में एकमेव ही होंगी और प्रत्येक व्यक्ति या पुरुष भी उसके लिये एकमेव होगा, अपने अनेक रूपों में या यों कहें कि अपने अनेक पक्षों एवं स्थितियों में ब्रह्म ही ब्रह्म पर क्रिया कर रहा होगा, सर्वत्र एक ही **नर-नारायण** व्याप रहा होगा। भगवान् की इस बृहत्तर लीला में दिव्य प्रेम के सम्बन्धों का आनन्द भी, अहंभावना में पतित हुए बिना, प्राप्त किया जा सकता है,--**ठीक वैसे ही जैसे मानव-प्रेम की परमोच्च अवस्था को भी 'दो शरीरों में एक ही आत्मा' की एकता कहा जाता है।** यह अहं-भावना जो विश्वलीला में इतनी सक्रिय है और वस्तुओं के सत्य को इतना मिथ्या रूप दे डालती है, लीला के लिये अनिवार्य ही हो ऐसी बात नहीं।

कारण, सत्य तो सदा यह है कि एक **'एकं सत्'** है जो आप ही अपने पर क्रिया कर रहा है, आप ही अपने साथ लीला कर रहा है, **अपने एकत्व में असीम है** और अपने बहुत्व में भी असीम है। जब व्यष्टिभूत चेतना विश्वलीला के इस सत्यतक उठ जाती है और इसमें निवास करने लग जाती है, तब कर्म के पूर्ण प्रवाह में रहते हुए भी, निम्नतर सत्ता को धारण करते हुए भी जीव ईश्वर के साथ एकमय रहता है, और तब न कोई बन्धन रहेता है, न कोई भ्रम। **वह आत्मा को प्राप्त करके अहं से मुक्त हो जाता है।**

-समाप्त

-श्री अरविन्द, 'योग समन्वय' पुस्तक से

विरोधी शक्तियों का प्रतिरोध

यह सर्व विदित है कि विरोधी आसुरिक शक्तियाँ निम्नतर प्रकृति की क्रियाओं का लाभ उठाती हैं और उनके द्वारा सिद्धि को बिगाड़ने, नष्टभ्रष्ट करने या उसमें विलम्ब कराने की चेष्टा करती हैं।

ऐसे भी कुछ लोग हैं जिन्हें विरोधी शक्तियाँ कभी स्पर्श नहीं करती।

स्थूल चेतना में साधारण मानव प्रकृति ऐसी सहज क्रिया होती है जिससे छुटकारा पाने में समय लगता है। निश्चय ही हम उन्हें निम्न प्रकृति की शक्तियाँ कहते हैं किन्तु मनुष्य को उन्हें केवल साधारण शक्तियाँ ही मानना चाहिये, न कि विरोधी। हमें उन्हें बदलना है परन्तु साधारणतया इसमें समय लगता है और इसे शान्तिपूर्वक किया जा सकता है।

व्यक्ति को विरोधी शक्तियों की अपेक्षा साधना के रचनात्मक पक्ष की ओर अधिक रहना होगा। यदि वह उन्हें विरोधी वस्तु मानकर उनके विषय में हमेशा विचार करता रहे और उनके आने पर उन्हें भूतावेश मानकर विक्षुब्ध हो जाय तो यह ठीक नहीं। ऐसी चीजें बहुत ही कम हैं जो सचमुच में विरोधी हों और उनमें तथा प्रकृति की साधारण क्रियाओं में भेद करना होगा। इनमें पहले प्रकार की चीज को तो दूर हटाना होगा और दूसरे प्रकार की चीजों से **शान्ति** के साथ तथा उनके बाह्य रूप से विचलित या अनुत्साहित हुए बिना निबटना होगा।

प्रकृति के दोष कोई बड़ी बात नहीं, उनसे क्रमशः निबटा जा सकता है। इन बाहर के आक्रमणों से, इन सुझावों से और उन गलत शक्तियों के अन्दर फैंके जाने से साधक को अपने को पूरी तरह बचाये रखना होगा।

निम्न प्रकृति अज्ञानमयी और अदिव्य है, यह स्वयं ज्योति और सत्य का विरोध नहीं करती, बस यह उनकी ओर खुली हुई नहीं है। परन्तु जो विरोधी शक्तियाँ हैं, वे केवल अदिव्य ही नहीं, वरन् दिव्यता की शत्रु भी हैं; वे निम्न प्रकृति का उपयोग करती हैं, उसे कुमार्ग में ले जाती हैं, उसे विकृत वृत्तियों से भर देती हैं तथा इस उपाय के द्वारा वे मनुष्य को प्रभावित करती हैं और यहाँ तक कि उसके अन्दर प्रवेश करने और उसे अपने अधिकार में कर लेने की या कम-से-कम उस पर अपना पूरा शासन स्थापित कर लेने की चेष्टा करती हैं।

सब प्रकार की अतिरंजित आत्मनिन्दा से तथा पाप, कठिनाई या विफलता का बोध होने पर **अवसन्न** होने की आदत से अपने-आपको मुक्त करो। ये सब भाव वास्तव में तनिक भी सहायता नहीं करते, बल्कि उल्टे ये एक बहुत बड़ी बाधा है और हमारी उन्नति को रोकते हैं।

ये सब धार्मिक मनोवृत्ति के परिचायक हैं, **यौगिक मनोवृत्ति** से इनका कुछ भी सम्बन्ध नहीं। योगी को चाहिये कि वह प्रकृति के सारे दोषों को इस दृष्टि से देखें कि वे निम्न प्रकृति की क्रियाएँ हैं और ये सब के अन्दर होती रहती हैं, और भागवत शक्ति में पूर्ण विश्वास रखते हुए स्थिरता और दृढता के साथ इनका नित्य-निरन्तर त्याग करता रहे-**पर न तो किसी प्रकार की दुर्बलता या अवसाद या अवहेलना के भाव को, न किसी प्रकार की उतेजना, अधीरता या उग्रता के भाव को अपने अन्दर आने दें।**

यह (प्राणिक अहंकार) साधारण मानव प्रकृति का एक अंग है, यह प्रत्येक व्यक्ति में होता है। हमें इसे परिशोधित और **रूपान्तरित** करना है, ताकि अहं के स्थान पर वह सच्ची प्राणिक सत्ता स्थापित हो जाय जिसकी यह विकृत छाया है।

निम्नतर प्रकृति की शक्तियाँ प्रायः ही विद्रोह करती हैं और अविद्या, कामना, दंभ, गर्व, विषय वासना, अहंकारमय इच्छा आदि की परिचित क्रियाओं से आसक्ति के कारण रूपान्तर का प्रतिरोध करती हैं, किन्तु वे स्वभाव से विरोधी नहीं होतीं। विरोधी शक्तियाँ वे हैं जिनके अस्तित्व का मूल प्रयोजन है भगवान् के विरुद्ध, उच्चतर प्रकाश और सत्य के विरुद्ध विद्रोह और भगवान् के कार्य के प्रति द्वेष !

अविद्याकी शक्तियाँ पार्थिव प्रकृति का विकृत रूप हैं और विरोधी शक्तियाँ उनका उपयोग करती हैं। वे मनुष्य पर हुए अपने कब्जे को बिना संघर्ष के नहीं छोड़तीं।

संदर्भ-अरविन्द के पत्र भाग-3

क्रमशः अगले अंक में...

सिद्धयोग :- शक्तिपात दीक्षा व कुण्डलिनी जागरण

भारतीय ऋषियों ने सृष्टि की उत्पत्ति के संबंध में अंतर्मुखी होकर खोज की तो पाया कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड, मनुष्य के शरीर में है। जब हमारे ऋषियों ने और गहन शोध किया तो पाया कि इस जगत् को रचने वाला **सहस्रार** में स्थित है और उसकी **शक्ति मूलाधार** में। इन दोनों के कारण ही संसार की रचना हुई है। उस परम पुरुष की शक्ति, उसके आदेश से नीचे उतरती गई और अलग-अलग बंध लगाकर सभी लोकों की रचना करके मूलाधार में स्थित हो गई। इसके **चेतन** होकर **उर्ध्वगमन** करते हुए सहस्रार में पहुँचने का नाम ही **'मोक्ष'** है। मोक्ष की प्राप्ति जीते जी होती है। मरने के बाद मोक्ष की कल्पना करना, एक **मृगमरीचिका** ही है और कुछ नहीं।

गुरु-शिष्य परंपरा में जो शक्तिपात दीक्षा का विधान है। उसके अनुसार गुरु अपनी शक्ति से कुण्डलिनी को चेतन करके ऊपर को चलाते हैं। गुरु का शक्ति पर पूर्ण **प्रभुत्व** होता है। इसलिए वह उस गुरु के आदेश के अनुसार चलती है। क्योंकि यह सहस्रार में स्थित **परमसत्ता** की **पराशक्ति** है। अतः यह मात्र उसी का ही आदेश मानती है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि जिस व्यक्ति को सहस्रार में स्थित **उस परम तत्त्व** की सिद्धि हो जाती है, वही इसका संचालन करने का अधिकारी है। यह शक्ति विश्व में, **एक समय** में, मात्र **एक ही व्यक्ति** के माध्यम से कार्य करती है। क्योंकि यह **सार्वभौम सत्ता** है, इसलिए वह व्यक्ति विश्वभर में अभूतपूर्व क्रांतिकारी परिवर्तन करने की सामर्थ्य रखता है।

यह भारतीय दर्शन की विश्व को **अभूतपूर्व** एवं **अद्वितीय** देन है। अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर के संस्थापक व संरक्षक, प्रवृत्तिमार्गी परम श्रद्धेय समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग अपने सद्गुरुदेव बाबा श्री गंगाईनाथजी योगी ब्रह्मलीन (जामसर) के आदेशानुसार इस **दिव्य ज्ञान** का **महाप्रसाद** बाँटने, विश्व में **अकेले** ही निकल पड़े हैं।

शक्तिपात से जब कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो जाती है तो **उर्ध्वगमन** करने लगती है। कई जन्मों के संस्कारों के कारण रास्ता अवरूद्ध रहता है। अतः साधक को विभिन्न प्रकार की यौगिक क्रियाएँ जैसेः- आसन, बंध, मुद्राएँ एवं प्राणायाम स्वतः ही होने लगते हैं। वह शक्ति साधक का शरीर, प्राण, मन और बुद्धि अपने अधीन कर लेती है। इस प्रकार जो क्रियाएँ होती हैं उन्हें साधक न तो करने की स्थिति में होता है और न ही रोकने की। वह शक्ति सीधा अपने नियंत्रण में सभी क्रियाएँ स्वयं करवाती है।

गुरुदेव के अनुसार भौतिक विज्ञान के शोधकर्त्ताओं की असंख्य समस्याओं का समाधान, इस ज्ञान से हो जाएगा। समाधि स्थिति में वह परमसत्ता हर समस्या का समाधान शोधकर्ताओं को करवा देगी। इस प्रकार मनुष्य जाति की असंख्य समस्याओं का समाधान हो जाएगा।

गुरु-शिष्य परंपरा में जिस सिद्धयोग अर्थात् महायोग का वर्णन है, उसके आदि गुरु कैलाशवासी भगवान् पर शिव हैं। शिव से यह ज्ञान अमर कथा द्वारा महायोगी **श्री मत्स्येन्द्र नाथ** जी को मिला। उनके परम शिष्य महायोगी श्री गोरखनाथजी ने इस सिद्धयोग से संसार का जो कल्याण किया है, वह सर्वविदित है। यह योग संसार के त्रिविध तापों-आदि **भौतिक, आदि दैहिक व आदि दैविक (Physical, Mental & Spiritual)** का शमन (नाश) करता है।

इसलिए संसार की कोई भी असाध्य बीमारी व वैज्ञानिक समस्या नहीं है; जिसका सिद्धयोग में समाधान न हो **अर्थात् सिद्धयोग में सब कुछ संभव है जो सद्गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग की शक्तिपात दीक्षा से मानवता में मूर्तरूप ले रहा है।**

सिद्धयोग से लाभ

समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग से मंत्र दीक्षा प्राप्त करने के बाद उनके चित्र का नियमित ध्यान एवं नाम जप द्वारा मातृशक्ति कुण्डलिनी के जागरण से साधक में निम्न परिवर्तन आ जाते हैं-

- सभी प्रकार के असाध्य रोगों जैसेः-एड्स, कैंसर, डायबिटीज, टी.बी, दमा, ब्लड प्रेशर, मिर्गी, बवासीर, हीमोफीलिया, हेपेटाइटिस व गठिया आदि से पूर्ण मुक्ति संभव।
- सभी प्रकार के मानसिक रोगों जैसेः-तनाव, पागलपन, उन्माद, फोबिया (भय), चिंता, अनिद्रा आदि से पूर्ण मुक्ति संभव।
- सभी प्रकार के नशों जैसेः- शराब, अफीम, हेरोइन, भांग, तम्बाकू (बीड़ी, सिगरेट व जर्दा) आदि से बिना किसी परेशानी के छुटकारा।
- विद्यार्थियों की **एकाग्रता** एवं **याददाश्त** में नाम जप व ध्यान द्वारा अभूतपूर्व वृद्धि।
- आध्यात्मिकता के पूर्ण ज्ञान के साथ भूत, वर्तमान एवं भविष्य की घटनाओं को ध्यान के समय प्रत्यक्ष देखना और सुनना।
- गृहस्थ जीवन में रहते हुए **'भोग एवं मोक्ष'** दोनों तत्त्वों की सहज प्राप्ति। इसके साथ ही जीवन की समस्त सांसारिक परेशानियों से छुटकारा।
- वैदिक दर्शन द्वारा ईश्वर की प्रत्यक्षानुभूति एंव साक्षात्कार।

❖❖❖

सद्गुरुदेव का आदेश ही सर्वोपरि है

मान सहित विष खायके, शम्भु भये जगदीश।
बिना मान अमृत पीये, राहु कटायो शीश।।

प्राचीन काल की कथा के अनुसार-समुद्र मंथन के समय 14 प्रकार के रत्न निकले थे। उसमें हलाहल जहर और अमृत भी थे। अमृत देवताओं के हिस्से में आया था। भगवान् विष्णु देवताओं को अमृत पिला रहे थे। अमृत पीने वाला अमर हो जाएगा, यह बात राक्षसों को मालुम थी। छल-कपट से 'राहु' नाम के राक्षस के मन में विचार आया कि मैं चुपचाप जाकर देवताओं की पंक्ति में खड़ा हो जाऊँगा तो अमृत पीकर अमर हो जाऊँगा।

ऐसी मनोभावना लेकर वह देवताओं की पंक्ति में खड़ा हो गया। भगवान् विष्णु देवताओं को अमृत पीला रहे थे। इसी कड़ी में उन्होंने 'राहु' को भी अमृत पीला दिया, लेकिन इतनी तीव्र गति से मालुम हुआ कि उन्होंने उसके गले से नीचे उतरने से पहले ही अपने सुदर्शन चक्र से गला धड़ से अलग कर दिया।

अर्थात् ईश्वर के घर परम सत्य ही चलता है। छल-कपटता, धोखे से या कोई काम या मंत्र ले भी लिया तो वो ही हाल होगा जो 'राहु' का हुआ।

भगवान् शिव का परम विधान है कि यदि कोई मेरा बार बार तिरस्कार भी करें तो मैं उसे माफ कर दुँगा लेकिन गुरु पद का एक बार भी अपमान किया तो उसको माफ नहीं किया जाएगा।

यदि इस अमर ज्ञान को प्राप्त करना है तो सद्गुरु चरणों की रज कण मात्र बनकर ही प्राप्त किया जा सकता है। सद्गुरु के आईने अर्थात् दर्पण में अनंत कोस तक दिखता है। इसलिए साधक अपने मन में कोई भी लोभ-लालच पालता है तो वह पकड़ में आ जाता है।

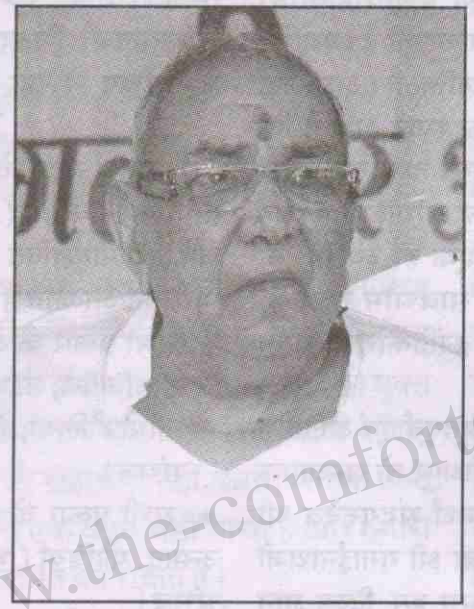

कुछ साधक गुरु बनने की लालचा पाल बैठते हैं जो फिर पतन के कुए में ही गिरते हैं।

वर्तमान में इस दुनिया को सृजित करने वाला, कल्कि और सद्गुरुदेव के रूप में प्रकट हुए, संजीवनी मंत्र दिया और आम इंसान की तरह दुनिया से विदा हो गये।

उन्होंने कह दिया कि मेरे जाने के बाद मेरी तस्वीर कभी नहीं मरेगी, वह आपको जवाब देगी, और जवाब ही नहीं हजार गुणा सही जवाब देगी। जब सद्गुरु के वचनों में सच्चाई है तो आप प्रार्थना करके देखो।

वर्तमान में पूरी दुनिया के लिए सद्गुरुदेव सियाग की तस्वीर ही सजीव सद्गुरु है। जो उनकी तस्वीर के सामने बैठकर मंत्र जप व ध्यान करेगा, उसमें वही परिवर्तन आएगा जो सद्गुरुदेव के भौतिक जीवन में रहते हुए आता था, आज भी हजारों लोग तस्वीर से ध्यान कर आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

कोई भी साधक भ्रमित नहीं हो, किसी भी बिचौलिये की जरूरत नहीं है। ज्यादा से ज्यादा सद्गुरुदेव के प्रवचन सुनें और सद्गुरुदेव से ही करूण प्रार्थना करें कि हे गुरुदेव ! आपका परम सत्य, सद्विवेक में आ जाए।

सद्गुरुदेव सियाग दासदासोहम की पद्धति को समूल नष्ट करने आए हैं। संबंध सिर्फ गुरु और शिष्य का ही होता है। बीच में किसी भी आचार्य की जरूरत नहीं होती है।

सद्गुरु आज्ञा के विपरीत चलना शिष्य के लिए गर्त का मार्ग है।

इसलिए सद्गुरुदेव भगवान् से करूण प्रार्थना यही हैं कि हे प्रभु ! आप सबको सद्बुद्धि देना और सद् पथ पर बनाए रखना।

www.the-comforter.org

गुरुदेव की दिव्य लेखनी से

मैं न्यूटन की आखिरी इच्छा को पूर्ण करने आया हूँ।

उसने कहा था — "मैं जब अपने पूरे जीवन पर नजर डालता हूँ तो पाता हूँ कि मैं एक अबोध बालक की तरह समुद्र के किनारे सीपियाँ, समुद्री घोंघों की हड्डियाँ ही चुनता रहा। अब मैं अन्तिम समय में जब उस विशाल समुद्र को देखता हूँ तो सोचता हूँ कि मैंने कुछ भी नहीं प्राप्त किया। इस विशाल समुद्र की खोज से ही शान्ति सम्भव होगी।"

यही नहीं मैं उन्हें उस तत्व की प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार करवाने आया हूँ जिसकी खोज हमारे ऋषि-मुनियों ने की थी। उन्हों ने इस भौतिक सूर्य जैसे लाखों सूर्य देखे। इसके अतिरिक्त उन्होंने देखा कि एक ऐसा ऊर्जा का पुञ्ज है जो इन लाखों सूर्यों को प्रकाशित कर रहा था। उन्होंने उस तत्व का जो ज्ञान प्राप्त किया मैं उसकी प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार करने सेवा में निकला हूँ।

यह ज्ञान मुझे मेरे संत सद्गुरु देव बाबा श्री गंगाईनाथ जी महाराज की अहैतुकी कृपा के कारण ही प्राप्त हुआ है। अतः मैं इसे गुरु प्रसाद की संज्ञा देता हूँ।

रामलाल चौधरी
13/01/1991

गुरुदेव की दिव्य लेखनी से

RCH

August 8, 1926 –

The Greeks had more light than the christians who converted them; at that time there was gnosticism in Greece, and they were developing agnosticism and so forth. The christians brought darkness rather than light.

That has always been the case with aggressive religions – they tend to overrun the earth. Hinduism on the other hand is passive and therein lies its danger....; That is the reason why they have degenerated and cannot do anything. They only take the forms adopted in the previous movement without realizing the changed circumstances and fresh requirements of the time."

"Sri Aurobindo"

"Aurobindo's yoga?"

The world is not either a creation of Maya or only a play, lila, of the divine, or a cycle of births in the ignorance from which we have to escape, but a field of manifestation in which there is a progressive evolution of the soul and the nature in matter and from matter through life and mind to what is beyond mind till it reaches the complete revelation of Sachchidananda ~~of~~ Sachchidananda:- The ~~of~~ eternal divine principle of Existence (SAT) Consciousness (CHIT) and delight (ANANDA) in life. It is this that is the basis of yoga and gives a new sense of life."

"Sri Aurobindo"

ॐ श्रीगंगाईनाथाय नमः

April 8, 1907,

We reiterate with all the emphasis we can command that the kashatriya of old must again take his rightful position in our social polity to discharge the first and foremost duty of defending its interests. The brain is impotent without the right arm of strength.

"Sri Aurobindo"

www.the-comforter.org

नहीं मरोगे।

-छाती ठोककर कहता हूँ कि मैं हिन्दू हूँ और हिन्दू धर्म का असली स्वरूप दिखाता हूँ।

-नाम का नशा चढ़ जाएगा तो इन भौतिक नशों से छुट्टी हो जाएगी। नशा छूटता है, वृत्ति परिवर्तन से।

-डॉलर को रुपये के सामने झुकना पड़ेगा, यह ज्ञान तो झुकने से मिलेगा। हरि नाम के जप के बिना कोई योग सिद्ध नहीं होता है।

-मुक्ति कोई खिलौना नहीं है, जो गुरु के पास जाते ही पकड़ा देगा, गुरु तो क्रियात्मक विकास का पथ बताता है।

-मैं जो कर रहा हूँ, यह पतंजलि योग दर्शन मूर्तरूप ले रहा है।

-एक मात्र हमारा धर्म (हिन्दू धर्म) जो है विश्व शांति की बात करता है, और मानव मात्र को Address (संबोधित) करके बोलता हैं। ईसाई का अलग है, मुसलमानों का अलग है, दूसरों का अलग है, ऐसा नहीं कहता है। लेकिन ये बात ठीक है आज हम पतन के काल से गुजरते हुए आ रहे हैं।

-मगर गुरु तो मानव मात्र में परिवर्तन लाने की बात करता हैं। अब वो दूसरे-दूसरे धर्म वाले लोग अपने-अपने हिसाब से सोचते हैं। हमने भी उन परिस्थितियों के कारण से अपने आपको अलग-अलग भागों में बाँट करके संकीर्ण दायरे में कैद कर लिया है। परन्तु हमारा धर्म इतना ही नहीं है। ये मनुष्य के विकास का क्रियात्मक पथ बताता हैं।

-मेरे शरीर में और आपके शरीर में कोई अंतर नहीं है। जो आपके पास है वो ही मेरे पास हैं। **मैंने गुरु की कृपा से, उनकी मेहरबानी से उसको जीवन में काम लेना सीख लिया, आप भी सीख सकते हो।** आप भी अपना विकास कर सकते हो। ये आपका अपना विकास है और विकास भी ऐसा जो आज तक नहीं हुआ।

-इसीलिए हमारा देश ही नहीं, संसार भी बड़ा आश्चर्य कर रहा हैं- और मोक्ष के लिए नहीं बल्कि इसीलिए कि Disease (बीमारी) क्यों खत्म हो रही हैं? अब ये सारा परिवर्तन धर्म पर Based (आधारित) है। इसीलिए संसार के धर्मगुरु बहुत असमंजस में हैं। इस वक्त विश्व की जो स्थिति है, जो संसार में घटनाएँ घटती हैं, उससे हम अलग तो नहीं रह सकते। इस भूमंडल पर रहना है तो उन लोगों के साथ, वो लोग जैसा आपस में कर रहे है, हमको भी उसी हिसाब से माहौल में चलना है। आज धर्मों का जो टकराव शुरू हो गया हैं उनसे हम अलग नहीं रह सकते। जो धर्म जिस कारण से पैदा हुए, वो अपने हिसाब से चल रहे हैं।

-एक मात्र हिंदू धर्म है जो **'अहिंसा परमोधर्म'** की बात करता है, केवल मात्र हिन्दू ही ! मानव मात्र के कल्याण की बात करता हैं, विश्व शांति की बात करता है। विश्व शाँति की बात और भी धर्मों वाले लोग करते हैं- **हाइड्रोजन बम से।** हम उस डर से नहीं करते हैं, हम अपने विकास की बात करते हैं तो विश्व के लोग ज्यादा आकर्षित हो रहे हैं। West (पश्चिम) से भी कई पत्र आते-जाते रहते हैं। अब ये रोग क्यों खत्म (ठीक) हो रहे है, उनको बड़े असमंजस की बात लग रही हैं, बड़ी दुविधा में फँसे हुए हैं कि धर्म ही रोग का नाश कर दे तो फिर विज्ञान क्या करेगा। वास्तव में धर्म क्या है, लोग समझते ही नहीं।

-हमारी संस्कृति और पश्चिम की संस्कृति में रात-दिन का अंतर हैं। हमारी भाषा जितनी **परिष्कृत** है। पश्चिम में उसके लिए कोई मूल (Proper) शब्द नहीं हैं। अब धर्म को उन्होंने Religion कर दिया। Religion तो बदल देते हैं परन्तु **धर्म** को बदल ही नहीं सकते, वो तो धारण करने की चीज हैं। धन के लालच में कुछ लोग धर्म को बदल रहे हैं मगर धर्म तो बदला ही नहीं जा सकता, Religion बदला जा सकता है।

आज जो यहाँ हो रहा है, कोई साधारण घटना नहीं हो रही है। ये वैदिक दर्शन का अंतिम और पूर्ण विकास है।

अब रोग भी खत्म हो रहे हैं इसीलिए संसार बड़ा आकर्षित हो रहा है। ये बात भी सही हैं कि मेरे पास इस देश में 90 प्रतिशत लोग रोग के लिए आते हैं। मैं आपको बताऊँ कि योग क्या है? रोग क्या है?

योग के बारे में बड़ी भ्रांतियाँ है- पूरी दुनिया में। आज योग का कहीं वर्णन आएगा तो आपके दिमाग में एक ही बात आएगी कि कोई रोग है, इसको शारीरिक कसरत करवाई जाएगी। **जबकि योग का संबंध रोग से है ही नहीं।** इस वक्त का, "पतंजलि योग दर्शन" Authentic (प्रामाणिक) ग्रंथ है, उसको उठाकर देख लो। उसके 195 सूत्रों में कहीं भी रोग का वर्णन नहीं हैं। हमारा दर्शन तो मोक्ष की बात करता है और मोक्ष आज एक कल्पना की चीज है।

सद्गुरुदेव के इन दिव्य अमर ब्रह्माक्षरों पर दृढ़ विश्वास के साथ सघन नाम जप व नियमित ध्यान ही विकास का मुख्य सोपान है।

-सम्पादक

क्या एक निर्जीव चित्र, सजीव (मानव) पर प्रभाव डाल सकता है?

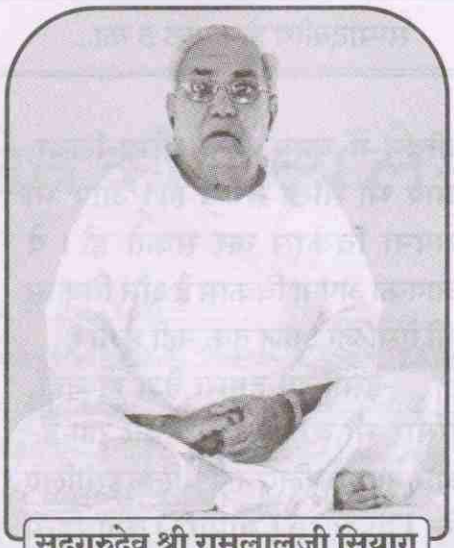

सद्गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग

प्रत्यक्ष को प्रमाण क्या? ध्यान करके देखें।

► ध्यान की विधि ◄

गुरुदेव सियाग सिद्धयोग आराधना की एक सरल विधि है। इसमें दो कार्य करने होते हैं। सघन नाम (मंत्र) जप व नियमित ध्यान।

आरामदायक स्थिति में बैठकर थोड़ी देर के लिए गुरुदेव के चित्र को एकाग्रता से खुली आँखों से देखें। फिर आँखें बंद करके समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग के चित्र को अपने आज्ञाचक्र पर (जहाँ बिन्दी या तिलक लगाते हैं।) केन्द्रित कर, गुरुदेव से 15 मिनट के लिए ध्यान स्थिर करने की करुण प्रार्थना करें। अब गुरुदेव द्वारा दिये गए संजीवनी मंत्र का मानसिक रुप से सघन जाप करें। (बिना होंठ-जीभ हिलाए)। नाम जप ही ध्यान की चाबी (Key) है। इसको तेल की धार की तरह, हर समय (Round the Clock) सघन मंत्र जप करें।

इस दौरान कोई भी यौगिक क्रिया (आसन, बंध, मुद्रा या प्राणयाम) हो तो घबराएँ नहीं तथा न ही इन्हें रोकने का प्रयास करें। ध्यान अवधि पूर्ण होते ही सामान्य स्थिति हो जाएगी। इस विधि से सुबह-शाम खाली पेट नियमित रुप से (केवल 15 मिनट) ध्यान करते रहें।

► Method of Meditation ◄

Sit in a comfortable position. Look gurudev's picture for some time then close your eyes and try to imagine gurudev at place between your eyebrows (third eye) and request for 15 minutes of meditation. While thinking of gurudev's image, silently chant (without moving your lips or tongue) gurudev's mantra or any spiritual force (**Ram, Krishna, Jesus, Waheguru, Allah etc.**) which you believe in.

During meditation if you experience any kind of automatic movement then don't try to stop. The movements will stop automatically after 15 minutes.

www.the-comforter.org

शक्तिपात-दीक्षा

शक्तिपात दीक्षा एक महान् और दिव्य विज्ञान है जिसके द्वारा सिद्धगुरु अपनी दिव्य शक्ति को शिष्य में सीधे संप्रेषित कर, उसकी सुषुप्त शक्ति कुण्डलिनी को जाग्रत करते हैं।

गुरु शिष्य परम्परा में चार प्रकार से शक्तिपात दीक्षा का विधान है। स्पर्श द्वारा, दृष्टि द्वारा, संकल्प व शब्द (मंत्र) दीक्षा द्वारा।

- गुरुदेव का मंत्र चेतन (**Enlightened**) मंत्र है, इसमें प्राण प्रतिष्ठा की हुई है। इस मंत्र में असंख्य ऋषियों की कमाई है।
- नाम जप ही चाबी (**Key**) है। इसको तेल की धार की तरह, हर समय (**Round the Clock**) सघन जपो।

गुरुदेव की दिव्य आवाज में संजीवनी मंत्र सुनने के लिए डायल करें–07533006009

सभी जाति–धर्मों के जिज्ञासु स्त्री–पुरुषों को स्नेह निमंत्रण।

मुख्यालय : **अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र**

होटल लेरिया के पास, चौपासनी, जोधपुर (राज.) 342 003 सम्पर्क : 0291-2753699, 9784742595

Web : www.the-comforter.org

पूज्य सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग (ब्रह्मलीन)

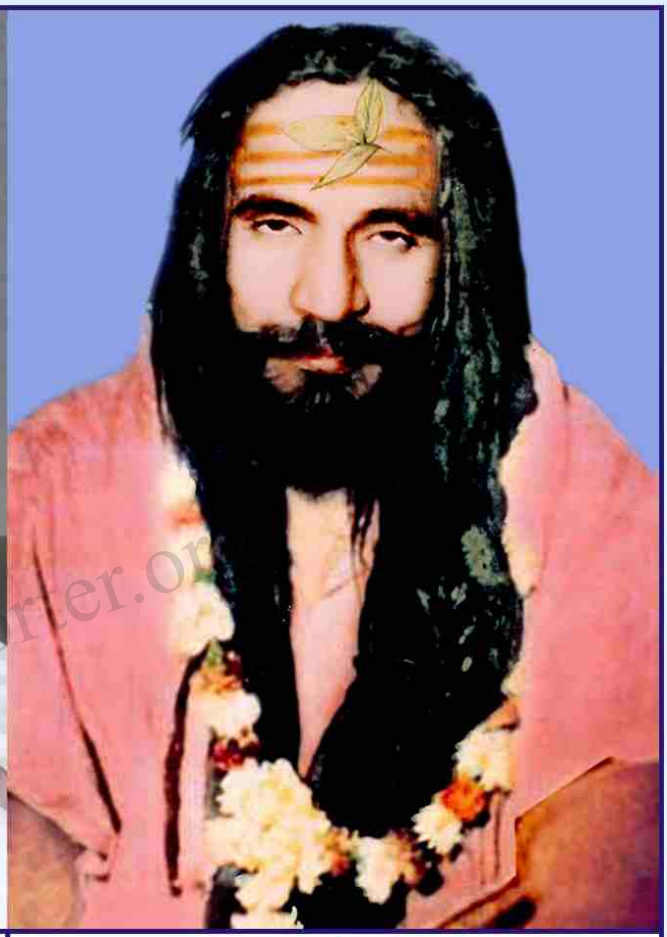

बाबा श्री गंगाईनाथ जी योगी (ब्रह्मलीन)

www.the-comforter.org

यह एक ऐसा विज्ञान है जो आज तक प्रकट नहीं हुआ और अब मेरी तस्वीर से ध्यान होगा, आप लोग इस देश में ही नहीं, दुनिया में कहो कि इस व्यक्ति की तस्वीर का ध्यान करने से, एड्स और कैंसर सहित सभी रोग ठीक हो जाएंगे।

अब यह Live (सीधा प्रसारण) जो हो रहा है, यह तो National (राष्ट्रीय) और International (अंतर्राष्ट्रीय) Level (स्तर) पर हो रहा है। मेरी आवाज तो चली गई आकाश में, अब इसको कोई रोक नहीं सकेगा और इसकी *(स्वयं की ओर इशारा करके)* तस्वीर नहीं मरेगी, इसकी तस्वीर नहीं मरेगी।

–समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

(30 जुलाई 2009) जोधपुर आश्रम में विशाल शक्तिपात–दीक्षा कार्यक्रम के दौरान

''समर्थ सद्गुरुदेव का महामिशन, उनकी तस्वीर का ध्यान व उनकी वाणी में दिव्य मंत्र द्वारा, जब तक ये पृथ्वी रहेगी तब तक चलता रहेगा।''

R.N.I. NO. : RAJMUL/2008/26365 * POSTAL REGD. NO. JODHPUR/269/01.01.2017 & VALID UP TO 31.12.2019
DATE OF ISSUE : EVERY MONTH 27 & DISPATCH 28-29

मनुष्य जाति में अद्भुत बदलाव

''मेरे शिष्यों में तो सभी जाति के लोग हैं। अब शरीर का सिष्टम तो सबका एक जैसा है, परिवर्तन भी सब में एक जैसा ही आ रहा है। मैं तो कह देता हूँ-हिन्दू कभी धर्म परिवर्तन में विश्वास नहीं रखता है, वो तो मनुष्य के रूपान्तरण की बात करता है, मनुष्य के परिवर्तन की बात करता है।

कितने ईसाई मुसलमान बना लिये, कर क्या लिया ? मैं तो कहता हूँ आप जिस धर्म में हो; बैठे रहिये। मगर अपने विकास की एक क्रियात्मक विधि है। उसके अनुसार अपनी शक्तियों को चेतन करके जीवन में उपयोग लो।

गुरु के पास देने-लेने के लिए कुछ नहीं होता है। देखिये ! मैं आपको बताता हूँ, जो सिस्टम मेरा है; वो आप सब का है। आप जन्म से पूर्ण हो। आपको इसकी जानकारी नहीं है। मैं आपको कुछ नहीं दूँगा। मैं तो आराधना का एक तरीका बताता हूँ, उससे आप अपनी असलियत (वास्तविकता) जान जाओगे; आप क्या हो ?

देने-लेने के लिए, किसी के पास कुछ भी नहीं है ! बाहर से आपको उम्मीद करने की आवश्यकता ही नहीं है, जो कुछ है-अंदर है, उसको चेतन करने का एक तरीका है।''

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

अवितरित प्रति निम्न पते पर लौटायें
Spiritual Science • स्पिरिचुअल साइंस
अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, होटल लेरिया के पास, चौपासनी
पोस्ट बॉक्स नं.41, जोधपुर (राज.) 342003 फोन: 0291-2753699, मो. : 9784742595

मुद्रित सामग्री (Printed Matter)

सेवा में,
श्रीमान् -समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

स्वत्वाधिकारी : अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर के लिए प्रकाशक व मुद्रक राजेन्द्र कुमार चौधरी के लिए ताज प्रिण्टर्स, बोराणा हाऊस, जालोरी गेट के अन्दर, जोधपुर से केवल मुद्रित एवं अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, होटल लेरिया के पास, चौपासनी, जोधपुर (राजस्थान) से प्रकाशित। सम्पादक - रामूराम चौधरी